॥ श्री शंखेश्वर पार्श्वनाथाय नमः ॥

श्रीहित विजय जैन ग्रन्थ माला पुष्प नं० ३०

रूपसेन

लेखक—
मेवाड़ केसरी श्री नाकोड़ा तीर्थोद्धारक पूज्य जैनाचार्य
श्रीमद् विजय हिमाचल सूरीश्वर शिष्य
मुमुक्षु भव्यानन्द विजय "ज्यो० साहित्य रत्न,

प्रकाशक:—
श्री हित सत्क ज्ञान मन्दिर
मु० पो० घाणेराव, (मारवाड़ -फालना

वीर सं० २४८५	मूल्य १)	हीर स्वर्ग सं० ३६३
विक्रम सं० २०१५		ई० सन् १६५८

इसकी आय पुस्तक प्रकाशन में लगेगी।

पुस्तक प्राप्ति स्थान—

(१) श्री हित सत्क ज्ञान मंदिर

घाणेराव (मारवाड़) वाया-फालना

———

(२) श्री बुधसिंहजी हीराचंदजी वैद

जौहरी बाजार जयपुर (राजस्थान)

———

(३) श्री महावीर जनरल स्टोर

सोजत सिटी (राज०)

———

(४) शाह लालचंद पुरूषोत्तमदास

रैया संघवी सेरी

वढवाण सिटी (सौराष्ट्र)

मुद्रक—

दी डायमण्ड प्रिंटिंग प्रेस

जयपुर (राज०)

परम पूज्य मेवाड़ केसरी श्री नाकोड़ातीर्थोद्धारक
श्री हितान्तेवासि वालब्रह्मचारी आचार्यदेव

श्रीमद् विजय हिमाचल सूरीश्वर जी

: श्री :

जिन्होंने मुझे संसार का त्याग कराया, तप और त्याग का मार्ग बताया, कीचड़ में फंसते हुए को उबारा, सद्ज्ञान द्वारा आत्म कल्याण का सरल उपाय बताया, भगवान् महावीर स्वामी के शासन की सेवा का पाठ पढाया, और मोक्ष मार्ग पर चलने का आदेश दिया, उन मेरे गुरुदेव, पतितोद्धारक, मेवाड़ केसरी श्री नाकोड़ा तीर्थोद्धारक, बालब्रह्मचारी आचार्य देव श्री मद् विजय हिमाचल सूरीश्वर जी के कर कमलों में सादर सविनय सप्रेम समर्पण

शिष्याणु—

"भव्यानन्द"

लेखकीय कलम

मान्यवर पाठक वृन्द !

गत वर्ष मेरा चातुर्मास सोजत सिटी में था तब व्याख्यान में श्राद्धविधि तथा रूपसेन चरित्र मैंने पढा. उस समय सोजत के कईएक भाईयों ने मुझे आग्रह किया कि रूपसेन चरित्र का हिन्दी अनुवद कर लेना चाहिये और वह भी आज के युग की शैली में। यद्यपि मेरे शब्दों में न तो रोचकता है और न माधुर्यता ही। फिर भी मैंने उस भाईयों के विचारों का स्वागत किया, और अपनी बुद्धि के अनुसार इसे ठीक तरह से लिखने का प्रयत्न किया है। पाठक महोदय से प्रार्थना है कि एक वार अवश्य पढने का अवकाश निकालेगें तो मैं अपने परिश्रम को सफल समझूंगा।

इस पुस्तक के प्रकाशन में कईएक उदारदिल महानुभावों ने द्रव्य सहायता देने की जो उदारता बताई है तदर्थ में उन्हें हार्दिक धन्यवाद देता हूं।

दो शब्द लिखने का कष्ट महाराणा संस्कृत कालेज उदयपुर के प्रीसिंपल महोदय ने किया है अतः आप का पूर्ण आभारी हूं।

जयपुर श्री संघ के मन्त्री महोदय श्री हीराचन्दजी वैद ने इस पुस्तक की प्रस्तावना लिखने का जो कष्ट उठाया है अतः आपका भी आभारी हूँ।

पाठक महोदय ! प्रेस तथा दृष्टि दोष की गल्तियां को सुधारते हुए पढने का कष्ठ करें। यही मंगल कामना !

——❀——

इस पुस्तक के लेखकः—

श्री हिमाचलान्तेवासी मुमुक्षु भव्यानन्द विजय
"व्या० साहित्य रत्न"

दो शब्द

मुनि श्री भव्यानन्द विजयजी महाराज की लिखित पुस्तक रूपसेन को मैंने सरसरी दृष्टि से देखी, इससे मैं अति प्रभावित हूआ हूँ, जिस तरह का आज साहित्य निर्माण हो रहा है उस में यदि इस तरह के साहित्य की संख्या अधिक हो तो देश के युवा, बाल, वृद्ध सब ही के लिये नैतिक जागरण में महान् प्रभावकारी सिध्द हो सकता है।

मुनि श्री कुच्छ दिन मेरे पास कालेज में अध्ययन कर चूके हैं, उनकी कुशाग्र बुध्दि से मैं तब ही से प्रभावित हूँ। त्याग मार्ग की ओर प्रवृत्त होकर भी मुनि श्री साहित्यिक क्षेत्र में जो प्रगति कर रहे हैं वह स्तुत्य है। मैं आशा करता हूँ उपरोक्त पुस्तक सब को पसंद आयेगी।

श्री खड्गनाथ मिस्र

न्याय व्याकरण वेदान्ताचार्य, लब्धस्वर्णपदक,

प्रिंसिपल

महाराणा संस्कृत कालेज, उदयपुर

ता० २७/६/५८ (राजस्थान)

प्रस्तुत पुस्तक के दानदाताओं

की

★ शुभ नामावली ★

—— × ——

२००) सेठ मांगीलालजी मूलचंदजी खिच्या — चाणेराव (मारवाड़)

१०१) शाह श्री कपोल भाई की धर्मपत्नी श्रीमती पुष्पादेवी — जयपुर (राज०)

७५) श्राविका श्री नेनीबाई — केलवाड़ा (मेवाड़)

५१) श्री कन्हैयालाल भाई चंदुलाल भाई — जूनाडीसा (पालनपुर

५१) श्री अभयमलजी सिंघवी की धर्मपत्नी श्रीमती शुभ कुंवर देवी — जोधपुर (राज०)

५१) श्री सूरजमलजी तातेड़ की धर्मपत्नी श्रीमती बालु देवी — धाकड़ो (सोजत)

५१) श्री गणेशमलजी तलोकचन्दजी धोका देसुरी — (मारवाड़)

२५।) श्रीतेजभाणजी टेकचंदजी वोरा बनूवाले — जयपुर (राज०)

२५) श्री इन्द्रचंदजी सुजानमलजी कोठारी — जयपुर (राज०)

२५) श्री अमरचन्दजी धरमचंदजी नाहर — जयपुर (राज०)

२५) श्री चीमनलालभाई पुरुषोत्तमदासभाई शाह — जोरावर नगर (सौराष्ट्र)

२५) श्री धनरुपमलजी भंडारी की धर्मपत्नी श्रीमती छेल देवी — जयपुर (राज०)

———

सेठ मांगीलालाजी मूलचन्दजी खिच्या घाणेराव (मारवाड़)

आप बड़े सज्जन, उदार, एवं धर्म प्रेमी व्यक्ति है घाणेराव मुच्छाला महावीर स्वामी के जीर्णोद्धार में सात हजार, श्री हित सत्क ज्ञान मंदिर भवन निर्माण में दो हजार तथा प्रस्तुत पुस्तक में तीन सौ रुपयों की सहायता की है तदर्थ धन्यवाद।

इसी तरह धार्मिक क्षेत्र में सदा भाग लेते रहें, और शासन देव आप को आरोग्य पूर्ण दीर्घायु प्रदान करें। यही शुभ कामना।

प्रकाशक

प्राक्कथन

प्रतिज्ञा पालक रूपसेन चरित्र मुमुक्षु भव्यानन्द विजय जी महाराज द्वारा लिखा गया है, महाराज श्री का यह चातुर्मास जयपुर में हुआ है और पुस्तक भी यहीं से प्रकाशित हो रही है। इसतरह की पुस्तक की प्रस्तावना तो किन्ही विशिष्ट व्यक्ति द्वारा लिखी जानी चाहिये थी पर न मालूम क्यों महाराज साहब ने मुझे आज्ञा दी कि इसकी प्रस्तावना तुम लिखो मैं दुविधा में था, पर योग्यता अयोग्यता के उपर काफी विचार करने पर भी आज्ञा पालन अपना मुख्य कर्तव्य मानकर मैं यह दो शब्द लिखने का दुसाहस कर रहा हूँ पर साथ ही यह भी सूचित करना उचित समझता हूँ कि इस प्रस्तावना के दो शब्दो से मूल पुस्तक की भाषा और भावना की तूलना करने का भूल करमी प्रयास न किया जावे।

आज से करीब ६ वर्ष पूर्व मुनि श्री के गुरुदेव मेवाड़ केसरी आचार्य श्रीमद् विजय हिमाचल सूरीश्वरजी महाराज का उदयपुर में चातुर्मास था। गुरुदेव के दर्शनों के लिये जाने का मुझे भी सौभाग्य प्राप्त हुआ। आचार्य देव के पास कुछ मुनिराज भी विराज रहे थे मैनें आचार्य श्री के सन्मुख जयपुर की धार्मिक सामाजिक स्थिती का विवेचन करते हुये उनसे जयपुर की ओर पधारने की आग्रह भरी विनती की आचार्य देव ने कारणवश अपनी असमर्थता जाहिर की ही थी कि एक नवयुवक मुनि ने उन सब परिस्थितियों के श्रवण के बाद भी तुरत कहा कि यदि आचार्य देव मुझे आज्ञा दे तो मैं जयपुर जा सकता हूँ ये नवयुवक मुनिराज हमारे इस रूपसेन चरित्र के लेखक ही थे। उसके बाद महाराज श्री के चातुर्मास गुजरात की तरफ हो गये। और जयपुर चातुर्मास की भावना भी दूर का स्वप्न देखने लगी।

यकायक आशा का दीप जला। महाराज श्री का [illegible] का चातुर्मास हुआ और अपने काफी निकट आदि जान कर जयपुर तपागच्छ संघ ने सर्वसम्मति से मुनिराज का जयपुर चातुर्मास कराने का निश्चय किया और आखिर कई आशा निराशाओं के बीच महाराज श्री का जयपुर चातुर्मास निश्चित हो गया।

यहां पर यह बताना भी अप्रासंगिक नहीं होगा कि गत बैशाख में अहमदाबाद में हुये श्रमण सम्मेलन के महान अवसर पर जयपुर तपागच्छ संघ की ओर से १२ सूत्री आवेदन पत्र गणाधिशों की सेवा में प्रस्तुत किया गया था जिससे जयपुर संघ की विचारधारा स्पष्ट रूप से सबही के सामने आचूकी थी, उस प्रतिवेदन ने भी महाराज साहब के जयपुर चातुर्मास की प्रेरणा में अत्यधिक कार्य किया।

महाराज साहब के इस चातुर्मास ने अनेक भ्रांतियों को निमूर्ल साबित कर दिया। आज यह विचारधारा सब ही जगह घर करती जारही है कि चातुर्मास बहुत महंगा पड़ता है। महाराज श्री का जिस शांति संयम और अपरिग्रहीता से यह चातुर्मास सम्पन्न हो रहा है उससे यह विचारधारा गलत साबित हो रही है। महाराज साहब की मृदुता, देश काल भाव को देख कर चलने की क्षमता, सामाजिक स्थिती को मजबूत बनाने में सक्रियता, ऐसे गुण है जिन्होंने अनेकों को आकर्षित किया है।

यह सब ही जानते है कि वर्ष में केवल पर्युषण पर्व का समय ऐसा आता है जिसमें हर कोई धार्मिक भावना की और आकृष्ट होता है। महाराज साहब की यह भावना रही कि पर्व में ऐसा कार्य किया जावे जिससे हमारे समाज के भावी सदस्य अपने इतिहास का ज्ञान प्राप्त कर सकें तथा कोई ऐसी योजना भी बनाई जावे जिससे आर्थिक स्थिती से कमजोर हमारे भाईयों को कुछ सहकार प्राप्त हो सके। भावना के अनुरुप पर्व पर

आपकी निश्राय में जैन कला प्रदर्शनी का आयोजन किया गया। इसे शायद अपने ढंग का पहला प्रयास कहदूँ तो अत्युक्ति नहीं होगी। इस प्रदर्शनी में पुराने हस्तलिखित ग्रन्थ, भगवान महावीर का रंगीन जीवन चरित्र राजस्थान के जैन मन्दिर और मूर्तियों के चीत्रों का अपूर्व संग्रह सैंकडो वर्ष पुराने हाथ के बने चित्र, नरहर (राजस्थान) में खुदाई से प्राप्त कसोटी पत्थर की ४॥ फुटी २ प्रतिमायें (जो आमेर के राजकीय संग्रहालय से प्राप्त की गई थी) एवं रत्न जड़ित चतुर्विंशति प्राचीन पृहद पट्ट आदि अनेक वस्तुओं का प्रदर्शन किया गया था। इस प्रदर्शनी को जैन ही नहीं अजैनो ने भी काफी संख्या में देखी और जैन धर्म के प्राचीन इतिहास को जानकर काफी प्रभावित हुयें। दूसरा कार्य छात्रवृती योजना का शुरु हुआ। समाज के किसी भी बालक को आर्थिक स्थिती वश अपने अध्ययन को न रोकना पडे, यही इस छात्रवृती का मुख्य ध्येय है आशा है करीब ५० छात्र छात्राओं को इस योजना के अन्तर्गत लाभ मिल सकेगा।

महाराज साहब के चातुर्मास का आधे से अधिक समय सम्पूर्ण हो चूका है। जहाँ जयपुर पधारने तक महाराज साहब से साक्षात रूप में कोई परिचित नहीं था वहां आज समाज का बच्चा २ आपको जान चूका है। आप ही के उपदेश से सभा भवन के ऊपर आयम्बिल शाला का स्थल बन गया है जहाँ रोजाना का आयम्बिल चालू है।

महाराज श्री के इसी चातुर्मास में रूपसेन चरित्र प्रकाशित हो रहा है। मैं नहीं समझता मैं इसके सम्बन्ध में क्या लिखुं पर श्रद्धा के दो पुष्प तो अर्पित करने की भावना रखता हूँ।

इस चरित्र में महाराज श्री ने भारत के पूर्व इतिहास का एक सुन्दर नक्शा खिचा है कि किस प्रकार राजा को अपनी प्रजा का ख्याल

था और प्रजा भी किस तरह अपने राजा के लिये सर्वस्व अर्पण को सदैव तत्पर रहती थी। कथानक में विशेषता यह दिखती है कि जहां २ निती की व्याख्या का प्रसंग आया है लेखक ने उसे बहुत विस्तृत सुलभ और सुबोध भाषा में लिखा है जिससे साधारण ज्ञान वाला भी कहानी के पढ़ने के साथ निती के कुच्छ सूत्र भी अवश्य ही समझ कर ग्रहण कर सके। इस चरित्र में भारत की पुरानी सभ्यता और संस्कृति का भी अच्छा परिचय मिलता है।

"जिसके पुन्य जागरूक है वह चाहे बन में जाय रण में जाय, शत्र के समुह में चला जाय, जल तथा अग्नि में गिर जाय फिर भी उसकी रक्षा हो जायेगी पुन्य ही पुरुष की रक्षा करता है,, विचारों की दृढ़ता का कितना सुन्दर उदाहरण प्रस्तुत किया गया है वह भी उस वक्त जब रूपसेन सारी मुसीबतों से घिरा हुआ भयानक जगल में से गुजर रहा था। क्या ये शब्द चरित्र के पाठक के दिलमें पून्य के प्रति आस्था बमाने में सहायक नहीं है? आज के रोमांचकारी उपन्यास के स्थान पर यदि इस तरह की पुस्तकों का प्रचलन देश में वढ़ सके तो हमारे देश का नैतिक उत्थान कितना जल्दी वापस अपने सही स्तर पर आजावे।

पुस्तक को एक दफा पढ़ना प्रारम्भ करने पर पुरी पढ़े वगर छोड़ने का जी नहीं चाहता। खुशी है कि मुनि मण्डल का ध्यान इस तरह के साहित्य के निमार्ण की ओर जा रहा है। आज जब कि हमारा ज्ञान बहुत सीमित होता जा रहा है जब शास्त्रों का पठन और श्रवण हमें निरस मालूम होने लगता हैं तब इस प्रकार के नैतिक जागरण के लिये सरल भाषा में प्रकाशित साहित्य की उपयोगिता बढ़ जाती है।

हमतो वह दिन देखना चाहते हैं जब इस तरह के साहित्य को

राजकीय पाठ्यक्रम में स्थान मिले जिससे विद्यार्थियों की आज की मनोदशा को उचित मार्ग की ओर मोड़ा जा सके।

मैं आशा करता हूँ कि यह पुस्तक जन जन के लिये उपयोगी साबित होगी।

श्री आत्मानन्द सभा भवन
दि०–अनन्त चतुर्दशी २०१५

हीरानन्द वैद,
मंत्री
श्री जैन श्वे० तपागच्छ संघ
जयपुर

॥ आयतत्त्वाधिकार ॥

—:*:—

श्री विश्वकर्मा द्वारा विरचित आयतत्त्वाधिकार नामक शिल्प शास्त्र सम्बन्धी पुस्तक शीघ्र प्रकाशित की जा रही है जिसमें मकान, महल, मंदिर, उपाश्रय, धर्म स्थान वगैरेह कैसे बनाना चाहिये इसके लिये विस्तृत रूप से तथा सरल भाषा में इसी पुस्तक के लेखक द्वारा ही हिन्दी अनुवाद तथा सम्पादन किया गया है। दीपावली के मंगल प्रभात में पाठक के हाथ में देने का प्रयत्न किया जा रहा है। नकल मर्यादित हे, जल्दी मंगावें।

मिलने का पता—

श्री हित सत्क ज्ञान मंदिर

घाणेराव (मारवाड़)

वाया–फालना

॥ ॐ ॥

* ॐ श्री शंखेश्वर पार्श्वनाथाय नमः *

प्रतिज्ञा पालक

रूपसेन

चाहे तीर्थंकर हो या चक्रवर्ती, चाहे वासुदेव हो या प्रति वासुदेव, चाहे वलदेव हो या मंडलाधीश, चाहे राजा हो या रंक, प्राणीमात्र अपने अपने भाग्य के अनुसार सुख दुःख प्राप्त करते रहते हैं। इस में कोई शक नहीं, कि जिसका पुण्य जागरुक है वह चाहे पहाड़ों की चट्टानों पर वैठ जाय, गिरीकंदराओं में जा छीप कर वैठ जाय, अथवा किसी भी गुप्त स्थान में जा छीप जाय, फिर भी उन्हें सम्पदा अनायास मिल जायगी, सम्पदा स्वयं उन भाग्यवान पुरुष को ढूंढ निकालेगी, दुःख दौभाग्य तो उनके सामने तक नहीं फटकेगा, पुण्यवान जीव सदा सर्वदा और सर्वत्र मंगलमय समय व्यतीत करता है, और सर्वत्र उन पुरुष की विजय होती है जिनका कि पुण्य प्रबल है, विना पुण्य भली वस्तु का योग भी मिलना वड़ा असंभव ही नहीं अपितु दुःसाध्य है और पुण्यवान को अभिलपित वस्तु विना महेनत ही आसानी से उपलब्ध हो जाती है।

यह तो प्रत्यक्ष देखने में आता है कि मजदूर वर्ग को दिन भर तनतोड़ परिश्रम करने पर भी भरपेट अनाज नहीं मिलता है और व्यापारी वर्ग दिन भर गादी और तकीये के सहारे पड़े पड़े ही यथेष्ट एवं स्वादिष्ट षट् रस मय भोजन पा लेते हैं। इस का मुख्य कारण यदि सोचने बैठेगें तो यही ज्ञात होगा कि इस में प्रधान पूर्व का पुण्य ही है पुण्य के अभाव में मजदूर वर्ग को भोजन नहीं मिल रहा है, और व्यापारी पूर्व के पुण्य के हेतु यहां ऐस आराम कर रहा है। इसलिये यह मानना ही पड़ेगा कि पूर्व भव में जिसने पुण्य सम्पादन किया है वह यहां सुखी है और जिन्होंने पूर्व में पाप का थेला भरा है, वे लोग यहां सदा दुःखी रहते हैं क्योंकि मानव कर्म के मारा ही नव नवा खेल खेलता है, जैसे कर्म नचाता है वैसे ही मानव को नचना पड़ता है. कर्म कहो भाग्य कहो एक ही चीज है, ये पर्यायवाची शब्द है शुभ कर्म करने से पुण्य का उपार्जन होता है और अशुभ प्रवृत्ति के द्वारा पाप का वंधन होता है, अतः मानव को सदा जागृत रहना चाहिये।

जागृत रहने से अशुभ प्रवृति का जीवन में त्याग होता है और शुभ की तरफ जीवन झुकता है, शुभ के वल पर ही मानव सदा सुखी बन सकता है। देखिये यहां उस पुण्यवान जीवन का वृतान्त लिखने का लेखक का स्वल्प प्रयास है जिसने कि अपने जीवन में शुभ वंधन के वल पर कितने और कैसे आदर्श कार्य कर सब के मन को जीत लिया!

संसार के प्रत्येक मानव का मन वही जीत सकता है, जिसका कि महान् पुण्य है, पुण्यवान जीव ही आरोग्य सम्पन्न बनता है इतना ही नहीं किन्तु ऐश्वर्यशाली, और प्रतिष्ठावान भी

बनता है, तत्व में रुची, घर में सम्प और सम्पदा का मिलना, सुन्दर यश का मिलना, कुटुम्ब परिवार में बहुत प्रेम रहना, यह सब पुण्य के बल पर ही सम्भव है। पुण्यवान के लिये ऐसी कोई चीज नहीं है जो कि उसे न मिले, पुण्यशाली के लिये असंभव बातें भी संभव हो जाती है। राजगृही नगरी का नरेन्द्र मन्मथ का प्यारा पुत्र रूपसेन कुमार के जीवन में भी पुण्य के बल पर अघटित बातें भी आसानी से घटित हो गई। बिना महेनत चार अमूल्य चीजें भी प्राप्त हो गई। जर्जर कथा, पवन पावड़ी, जादु का दंडा, और अक्षय पात्र। इन चारों का प्रभाव कहो, चमत्कार कहो, बड़ा गजब का है। इन का चमत्कार सुनते ही हरएक की यही इच्छा हो जाती है, कि ये चीजें मुझे मिल जाय तो बेडा पार है लेकिन बिना पुण्य मिल नहीं सकती, चाहें साधु से मुंह धो कर क्यों न बैठ जाय!

जर्जरकंथा—पांच सौ स्वर्ण मोरा प्रतिदिन देती है।

पवन पावडी—आकाश में यथेष्ठ परिभ्रमण करा देती है।

जादु का दंडा—निर्जिव पदार्थ को सजीव बना देता है।

अक्षय पात्र—हजारों लाखों प्राणी को यथेष्ट भोजन देता है।

इन चार वस्तुओं की प्राप्ति भी प्रबल पुण्योदय के बिना नहीं हो सकती, पूर्व के भव में रूपसेन महान पुण्य सम्पादन करके आया था। जिससे यहां आसानी से उपरोक्त चार चीजें प्राप्त हो गई यहां पर यही विचार किया जाता है कि रूपसेन कौन! और ये चीजें कहां से और कैसे प्राप्त हुई! और इन चीजों से क्या क्या लाभ हुआ? इत्यादि सविस्तर रूपसेन का वृतान्त लिखा जा रहा है।

एक लाख जोजन के जंबू द्वीप के अन्तर्गत पांच सौ छब्बीस जोजन छ कला का दक्षिणार्ध भरत क्षेत्र रहा हुआ है। जिसमें लाखों नगर शहर तथा गांव बसे हुए है, पहले के जमाने में राजगृही नगरी सब से ज्यादा प्रसिद्ध एवं शोभायमान थी जिस में केवल व्यापार का केन्द्र ही नहीं अपितु कला तथा अभ्यास के भी बड़े बड़े केन्द्र थे। बहुत दूर दूर के लोग कला तथा अभ्यास के लिये यहां आया करते थे।

सेठ साहुकारों को दुकाने भी बड़ी मनोहर लगी हुई थी मानों की दान्तों की पंक्ति हो, मंदिर भी भव्य तथा विशाल थे जिस में सैंकडों ही नहीं किन्तु हजारों आदमियों का प्रतिदिन मेला दर्शनार्थ लग जाता था। सेठों की हवेलियें भी एक दूसरे से स्पर्धा करती थी। नगर के बहार बाग बगीचे की रचना भी बड़ी सुन्दर थी।

इस नगरी के नालंदा नाम के पाडा में चरम तीर्थंकर श्री भगवान महावीर ने १४ चउदह चौमासा किये थे। धन्य है उन नगरी की प्रजा को कि जिन्होंने भगवान महावीर का सौम्य दर्शन एवं दिव्य उपदेश पाकर अपने जीवन को धन्य बनाया भगवान के पुनित चरणारविन्द से पूत वह नगरी सब तरह से परिपूर्ण थी। नागरिक प्रजा में किसी प्रकार की अशान्ति न थी, होवे भी तो क्यों ? जिस का मालिक ही धर्मात्मा हो, न्यायनिष्ठ हो, प्रजा प्रिय हो, फिर तो पूछना ही क्या ? इन सर्व गुणों से सम्पन्न यदुवंशीय मन्मथ नाम का दानेश्वरी राजा राज्य कर रहा था, उनकी पट्टरानी का नाम था मदनावली। वास्तव में यथा नामा तथा गुणावाली कहावत यहां पूर्ण रूपेण मिलती थी, रानी सती तथा धर्म परायणा थी। परस्पर इतना घनिष्ठ प्रेम था कि कहीं पर

जाय तो दोनों साथ ही साथ। जैसे कि मानो गाय और वाच्छरडा हो। एक दूसरे का विरह तो क्षण मात्र भी नहीं होने देते थे, कहना होगा, यह भी एक पुण्य है। क्योंकि पुण्यवान के किसी प्रकार का विरह नहीं होता है।

सज्जन को पूजा, दुष्ट को दंड, न्यायमार्ग से भंडार की वृद्धि, अपक्षपात और शत्रु से राष्ट्र की रक्षा ये पांच राजाओं के लिये परम कर्त्तव्य बताया है। मन्मथ राजा भी इन पांचों प्रकार के मार्ग के अनुसार ही राज्य व्यवस्था शान्ति से चलाता था।

अषाढ मास लगा, आकाश बादलों से ढक गया, बिजली चमकने लगी, बादल गर्जने लगे और मुशल धार वर्षा प्रारंभ हो गई, चारों ओर नदी नाला खल खल करते हुए चलने लगे, नगरी के बहार नदी में भी पूर जोर से पानी आ गया, पानी के कारण नगर में कोलाहल मच गया, लोक नदी नाला को देखने के लिये दौड़ा दौड़ करने लगे। सारे शहर में चहल पहल हो गई,

किसी उद्यानपाल ने राजा को निवेदन किया, हुजूर ! जल क्रीडा के लिये नदी पधारो, राजा ने उसे बधाई में भेट देकर रवाना किया, राजा भी जल क्रीडा के लिये नदी पर पहुंच गया, वहां जाने पर कर्मचारी द्वारा छोटीसी जहाज मंगवाई उस में बैठ राजा जल :विहार करने लगा, ज्यों ज्यों राजा आगे बढा त्यों त्यों राजा के हृदय में हर्ष अधिकाधिक बढता गया, अचानक राजा की दृष्टि दिव्य आभूषणों से सम्पन्न पानी में तैरते हुए किसी पुरुष पर जा पड़ी, उस को देख राजा ने सोचा, यह क्या मामला है। स्नान करने वाला व्यक्ति कपड़े उतार कर करता है। मगर यह तो सब कपड़े पूर्वक तैरता है, इन के पीछे जाना

चाहिये । ज्यों ही राजा उनके पीछे पीछे जाने लगा त्यों ही वह आगे आगे बढता ही गया, राजा फिर से ध्यान पूर्वक देखता है तो केवल पानी पर तैरता हुआ माथा ही देखने में आता है। राजा बड़े आश्चर्य में पड गया। फिर भी उनके पीछे पीछे जहाज चलाता ही गया; आखिर राजा देखता है तो माथा पानी पर स्थिर हो गया, यह घटना देख राजा ताजूब हो गया, उस के निकट जा राजा ने उस को चोटी पकड़ ऊपर खींचा तो केवल माथ ही हाथ में आ गया, न तो पांव है न हाथ है और न शरीर ही। राजा का हृदय धड़क धड़क करने लगा, हाय! हाय! यह क्या आपत्ति आ गई! शरीर की सारी शक्ति लगा कर राजा ने हिम्मत पूर्वक मस्तक से पूछा! भाई! तुम कौन हो! और यह केवल मस्तक ही क्यों है। उसने उतर में कहा मैं देव हूं और मैं अपनी शक्ति से अनेक रूप कर सकता हूं। मगर तुम कौन हो यह बताओ। मैं यहां का राजा हूं, और मेरा नाम मन्मथ है। राजा ने काम्पते हुए उत्तर दिया।

यह सुन मस्तक ने कहा, यदि तुम राजा हो तो फिर अन्याय क्यों करते हो? मैंने तुम्हारा कुछ भी अपराध नहीं किया, फिर भी तुमने चौर की भांति मुझे पकड़ लिया? राजा तो पांचवां लोकपाल है। शरणागत की रक्षा करने वाला होता है, दुर्वल हो अनाथ हो, वालक हो, वृद्ध हो, तपस्वी हो, किसी से भयभीत हो, इतने प्रकार के लोगों की सहायता करना राजाओं का परम धर्म है। इसीलिये तो लोकपाल कहा है, इतने प्रकार के गुणों से सम्पन्न राजा उत्तम माना गया है। लेकिन मेरे को तो विना अपराध ही पकड़ लिया, अब तुम ही बताओ कि अन्याय किस को कहते है? वरना मेरे को जल्दी से जल्दी छोड़ दो। राजा को तो लेने के देने पड़ गये। राजा तो उस के

वचन सुन धूजने लग गया। उसी समय विना विलम्ब किये ही उसे छोड़ दिया। राजा तो चूप चाप खड़े खड़े देखते ही रह गया। बोलने की हिम्मत भी न रही।

देव का मस्तक समुद्र में गिरते ही हाथी वन गया. न देव है, और न मस्तक है।यह दृश्य देख राजा का जी ललचाया, कौतुक वश नाव को छोड़ कर हाथी पर चढ़ बैठा, ज्यों ही राजा हाथी पर बैठा त्यों ही हाथी आकाश में उड़ गया हाथी पर बैठा हुआ राजा आकाश मार्ग में जाता हुआ पृथ्वी पर रहे हुए अनेक नगर पहाड़ नदी नाला वगैरह कौतुक को देखने लगा, मगर हृदय में भय भी कम न था. वह जानता था कि नीचे पड़ गया तो मेरी क्या दशा होगी ? चूरे चूरा हो जायगा। और कहां जाके पडूंगा जिसका पता भी न चलेगा। लेकिन देव पड़ने भी तो कैसे देवे ! हाथी तो सीधा भयंकर जंगल में जा राजा को सून्ड से नीचा उतार कर अदृश्य हो गया। न तो मस्तक है और न हाथी। केवल राजा अकेला ही रह गया।

घडियाल में तो सदा वारा वजते रहते है मगर यहां तो राजा की वारा वज गई। चिन्ता में पड़ गया। अरे ! ये क्या हुआ ? हाथी मुझे भयानक जंगल में छोड़ कहां छीप गया ? अब मैं अपने घर भी नहीं जा सकता, क्यों कि रास्ता जानता नहीं। यह तो वड़ा भारी संकट सामने आगया, अब क्या करूं किधर जाऊं। वास्तव में दुःख रुपी सागर में डूब गया, इसा विचारों के साथ राजा इधर उधर वन में परिभ्रमण करने लगा।

उनके भाग्य तीव्र थे प्रवल पुण्य योग से खींचे हुए भया वह जंगल में भी अचानक श्री धर्माचार्य नाम के गुरु महाराज

का आगमन हो गया। आचार्य देव को देखते ही राजा की चिन्ता मुंह ले भाग गई। दौडता हुआ गुरु देव के चरणों में जा पड़ा बड़े भाव से गुरु को राजा ने वन्दना की चरण स्पर्श कर हाथ जोड चरणों में बैठ गया। गुरुदेव ने भी समयोचित्त धर्मोपदेश देना प्रारंभ किया।

हे राजन्? खेद मत कर, धर्म के विषय में प्रसाद छोड़। क्योंकि मनुष्यत्व, आर्यदेश, आर्यजाती, सर्व इन्द्रियों से परिपूर्ण देह, दीर्घ आयुष्य, आरोग्य से सम्पन्न सुन्दर रुप मय शरीर वैभव, इतना महान पुण्य से ही मानव को मिलता है, मनुष्य भव को पाकर पानी के बुद् बुदे की भांति व्यर्थ खो देना केवल मूर्खता ही है, तेरा भी महान् पुण्य है। जिस से यहां इतना वैभव शाली और विशाल राज्य मिला है। मगर उस में जितनी भी अधिक आसक्ति होगी। उतना ही तेरा पतन होगा। इसलिये जहां तक बनें आसक्ति का त्याग कर और कुछ तो धर्म ध्यान किया कर, जिस से तेरा कल्याण होगा।

यह सम्पदा जल की तरंग की तरह चंचल है। यह प्रौढ जवानी भी चार दिन की चांदनी की भांति है, शरद ऋतु के बादल की तरह चपल आयुष्य है क्षण भंगूर शरीर है, बिजली के चमकारे की भांति चंचल लक्ष्मी है, इसलिये सब प्रकार से मोह ममता को छोड़ कर अनिन्दनीय जिन भाषित धर्म की आराधना कर, जिस से सहज ही में आत्म कल्याण हो सकेगा।

इस तरह गुरुदेव ने सच्चोट उपदेश थोडा मगर सारगभित दिया। जिस से राजा के हृदय में गहरा असर हो गया। उसी समय राजा प्रतिबोध पा गया। धर्म को स्वीकार करता हुआ

राजा बोला, हे गुरुदेव, आपके आदेशानुसार मैं यथा शक्ति धर्म की आराधना करता रहूंगा। लेकिन आप यह फरमाईये, वह देव कौन था ? मस्तक कौन ? और वह हस्ती रुप बन करके मुझे यहां निर्जन वन में छोड़ कहां चला गया ? वह वापस लौटेगा या नहीं ? इस तरह के प्रश्न राजा ने गुरुदेव से किया, गुरुदेव उत्तर देते हैं इतने में तो वह हस्ती रुप देव भी आ गया, उसे देख गुरुदेव ने राजा से कहा राजन ? ये तेरा बन्धु है, पहले श्रावक धर्म की आराधना की थी जिस से मर कर स्वर्ग में गया है वह अवधि ज्ञान के द्वारा तुझे राज लोलुपी जान करके तेरे को प्रतिबोध देने के लिये मस्तक, हाथी वगैरेह अनेक रुप बता करके आखिर तुझे यहां ले आया। और मेरे उपदेश से तुम को कुछ जागृति आई है। और धर्म स्वीकार किया है। यह सब कुछ देव की महिमा का फल है। तेरा महान् उपकारी है। ये तेरा सच्चा हितैषी है, क्योंकि सच्चा मित्र वही माना जाता है जो कि मित्र को धर्म में जोडता है। इसने तेरे को धर्म में जोड़ा है— आत्म कल्याण का मार्ग बताया है। इसलिये इसके उपकार को कभी न भूलना।

गुरुदेव की वाणी सुन राजा बड़ा खुश हुआ, गुरुदेव के सामने ही देव को कहने लगा। हे बांधव ! आज का दिन और आज की घडी मेरे लिये सफल है, तेरा दर्शन पाया और गुरुदेव से धर्म की प्राप्ति हुई। यह तुम्हारी कृपा का सुफल है। इसी तरह और भी कभी २ दर्शन देते रहियेगा।

प्रत्युतर में देव ने राजा को कहा, हे बांधव, आज पीछे जिनेश्वर भगवान द्वारा भाषित जैन धर्म की एकाग्रचित्त पूर्वक आराधना करते रहना। जिस से तेरे सब कुछ भला होगा।

राजा ने कहा। हे देव ? आप का कहना तो यथार्थ है किन्तु पुत्र के विना धर्म में चित्त स्थिर नहीं हो रहा है। मेरे बहुत पुत्र हुए मगर वे सब मर गये। यह दुःख मेरे हृदय में अत्यंत खटक रहा है क्योंकि नीति कारने भी लिखा है कि बचपन में मां मर जाय, जवानी के प्रारंभ में स्त्री, मर जाय, और बुढापे में पुत्र मर जाय, ये तीन दुःख भयंकर हुआ करता है। पुत्र के विना धन, विशाल राज्य, सब वृथा ही है, चूंकि स्थंभ के विना घर की शोभा नहीं, जीव के विना शरीर की कोई शोभा नहीं, मूल तथा फल फूल के विना वृक्ष की कोई शोभा नहीं, ठीक वैसे ही सुपुत्र के विना कुल की कोई शोभा नहीं है। जिस के भाई बंध नहीं है उन के लिये दिशा शून्य है, मूर्ख का हृदय शून्य है, दारिद्र के लिये सब शून्य है, वैसे ही पुत्र के विना घर शून्य, यानि श्मशान की तरह कहा है, जिस के घर के आंगणे में बालक धूली की क्रीडा करता है उसका घर नन्दन वन बतलाया है। और जिसके घर बालक है उस के वहां पोंखणा भी होता है। क्योंकि पुत्र होता है तो विवाह होगा। उस समय पोंखणा भी किया जाता है। इसलिये हे देव ? हे बांधव ? पुत्र का शोक मुझे बहुत खटकता है, कम से कम एक पुत्र जीवित रह गया होता तो भी मुझे कोई चिन्ता नहीं होती, राज्य का भार उसे देकर मैं निवृत्ति मार्ग ले धर्म ध्यान मय समय व्यतीत करता और आत्म चिन्तवन कर अपना कल्याण कर सकता।

यह सुन पुनः देव ने कहा। हे राजन् ? चिन्ता न कर, धर्म के असीम प्रभाव से तेरे दीर्घ आयुष्य वाले दो पुत्र होगें, इस में कोई शक नहीं है, क्योंकि धर्म की साधना करने से पुण्य उपार्जन होगा और और पुण्य के प्रभाव से सब मनोरथ पूरा हो जायगा, कहा है कि कमल के समान मुख वाली प्रिय स्त्री का

मिलना, स्वामी प्रसन्न चित्त वाला मिलना, घर के आंगणे में बालक का खेलना, ये तीन महान् पुण्य से ही प्राप्त होते है। इसलिये चिन्ता का सर्वथा त्याग कर धर्म की आराधना कर, जिस से सब अच्छा होगा।

राजा देव के वचनों पर अत्यंत प्रसन्न हुआ, गुरुदेव को भाव से पुनः सादर वंदना कर देव की सहाय से अपने नगर के उद्यान में पहुँच गया। वहां जाने पर देव ने सर्व रोग को हरण करने वाला सुवर्ण का कच्चोला राजा को दिया और कहा कि इस में पानी भर रोगी को पिलाने से सब प्रकार के रोग तत्काल मिट जायगा। ऐसा कहते ही देव आकाश में उड़ गया।

जिस समय नदी में से एका एक राजा को हाथी आकाश में उड़ा ले गया। तब से राजमहल चिन्तित अवस्था में था। सब के सब शोक सागर में डूब रहे थे। न मालूम राजा को कहां ले गया? कौन उडा ले गया? इसी विचार सागर में रानी, राज कर्मचारी मंत्री? पुरोहित सेठ साहूकार वगैरेह गोते खा रहे थे, राजा धीरे धीरे उद्यान से रवाना होकर अकेला राजधानी में पहुँच गया, जहां वे लोग शोक में बैठे थे। अचानक राजा को आते हुए देख सब पुनः खुश खुश हो गये।

धडा धड लोग प्रश्न करने लगे, महाराज? आप जहाज को छोड़ हाथी पर बैठे। और वह आकाश में उड़ा, वह कहां ले गया? आपने वहां क्या किया? और वापस यहां कैसे आना हुआ? इन सब का उत्तर दीजिये। राजा ने कहा आज विशाल सभा का आयोजन करो। सारी नागरिक प्रजा को भी इकठी करो, उसी समय राजा के आदेश का पालन किया गया, सभा में खडे

होकर के राजा ने कहा, पानी पर तैरता हुआ मस्तक देखा था। वह देव था। फिर उस ने हाथी का रूप बनाया, उस पर मैं बैठ गया, तब वह मुझे गुरुदेव के पास अटवी में ले गया, गुरुदेव से मैंने देशना सुनी और जैन धर्म स्वीकार कर वापस यहां शान्ति से पहुँच गया हूँ. इत्यादि सब वृतान्त सविस्तर अच्छे ढंग से सुनाया जिसे श्रवण कर सारी जनता में हर्ष ही हर्ष छा गया, सब ने एक ही आवाज से ध्वनी की, अपने राजा ने धर्म स्वीकार किया है तो अपने क्यों नहीं? सब के सब लोगों ने राजा का अनुकरण और अनुसरण किया। यह तो नियम ही है कि "यथा राजा तथा प्रजा" जैसा राजा हो वैसी प्रजा होती है। राजा तथा प्रजा दोनों अपने २ नियमानुसार धर्म ध्यान करने में तत्पर हो गये।

राजा की महारानी ने भी धर्म को स्वीकार किया। स्त्रियों का तो यह धर्म ही है कि पति के आदेशानुसार चलना। क्योंकि नीति में लिखा है कि पति के कार्य में मशगूल रहे, पति की आज्ञा शिरसा वंद्य माने, पति के कर्त्तव्य कार्य की चिन्ता करें, पति के मनोऽनुकूल वर्ताव करें, स्वजन में पूर्ण स्नेह रखें, और पति के मित्रों के साथ सद् व्यवहार रखें, देव गुरु और धर्म में आदर-भाव रखे और अतिथि का पूर्ण सत्कार करें, इतने लक्षणों से सम्पन्न स्त्री पतिव्रता मानी जाती है। ऐसी पतिव्रता जिस के घर में हो वहां स्वर्ग का सुख माना जाता है अर्थात् सम्पूर्ण गुणों से सम्पन्न राजा की महारानी थी राजा रानी में गाढ़ प्रेम था। देव पूजा, गुरु की उपासना, एवं धर्म की आराधना, सुपात्र में दान और सुकृत कार्य करने में दोनों साथ ही साथ रहते थे। दोनों शान्ति पूर्वक धर्म ध्यान मय समय को यापन करते हुए एक बार रानी को सुन्दर स्वप्न आया उसका फल रानी ने राजा से पूछा, उसने भी पुत्र होने का संकेत बताया, स्वप्न के अनुसार रानी ने गर्भ को धारण किया।

पुण्यवान जीव जब गर्भ में आता है। तब सुन्दर भावनाएं पैदा होती हैं। यदि जीव क्लिस्ट कर्मी गर्भ में आ जाय तो माता के हृदय में अनेक प्रकार की अशुभ भावनाएं पैदा होने लग जाती हैं। यहां तो गर्भ में महान् पुण्यवान जीव आया था। जिस से रानी के मनोरथ भी सब तरह से पूरे होने लगे। शान्ति पूर्वक रानी गर्भ का पालन करने लगी, नव मास परिपूर्ण होने पर रानी ने पुत्र को जन्म दिया। एक साथ दो पुत्र हो गये, माता पुत्रों को देख प्रसव की व्यथा भी भूल गई, पुत्र की खुशीयाली में माता दुःख को भूल जाया करती है। यह हर्ष का वेग ही बड़ा गजब का है, पुत्र की वधाई देने के लिये दासीयें दौडा दौड करने लगी। एक दासी ने राजा को वधाई दी। वधाई देने वाली दासी का दासत्व सदा के लिये मिटा दिया गया। उसी समय राजा स्वर्ण कच्चोला हाथ में लेकर रानी के महल में पहुँच गया, सर्व रोग हर प्याले में पानी भर दोनों पुत्रों को पहले पिलाया, नगर में राजा ने बडा भारी उत्सव मनाया, एक भी पुत्र नहीं था। जिस में एक साथ दो पुत्रों का जन्म हो गया। जिस से हर्ष खुब छा गया, राजा ने कैदियों को छोड दिया, पिंजरे के पक्षियों को भी स्वतंत्र विहारी बना दिये, यह राजधानी का नियम है कि पुत्र जन्म के समय और दूसरे राष्ट्र को जीत कर के आ जाय उस समय कैदी और पक्षी को छोड़ दिये जाय।

सगा सम्बन्धियों को भी राजा ने निमंत्रण दे दिया। पुत्र की खुशीयाली में अनेक प्रकार के भेटना भी आने लगा। स्वजन कुटुम्बियों का भी राजा ने वस्त्र भोजन वगैरेह से खुब सत्कार-सन्मान किया।

वडे वडे ज्योतिषियों को बुलाया। नक्षत्र वगैरेह की गिनती

करके ज्योतिषियों ने दोनों का नाम करण किया, बड़े का नाम रूपसेन और छोटे का नाम रूपराज कुमार। दूज के चंद्रमा की भांति दोनों भाई बढने लगे। पांच धाय माता द्वारा लालन पालन होने लगा।

वास्तव में वही पुत्र उतम माना जाता है कि न केवल कुल की वृद्धि करता है किन्तु पिताजी की कीर्ति, धर्म की उन्नति, और और अपने गुणों की दिन प्रतिदिन अधिकतर वृद्धि करता है। जंगल में रहा हुआ एक भी बावनाचंदन का वृक्ष सारे जंगल को सुगंधित कर देता है. एक ही चंद्रमा रात्रि के अंधकार को मिटाने में तथा जाज्वल्यमान प्रकाश देने में समर्थ है लेकिन लाखों तारा प्रकाश नहीं दे सकते, हजारों बबूल के वृक्ष भी जंगल को सुगंधिमय नहीं बना सकते। इसी तरह कपुत सैंकडों भी कुल की शोभा नहीं बढा सकते, जो कि सपुत एक ही सारे कुल को समुज्वल कर देता है।

माता पिता का यह फर्ज हो जाता है कि केवल पुत्र को जन्म देकर खुशी न मना कर उसे योग्य शिक्षा देकर होशियार बना देना। जिस से उस का भविष्व अन्धकारमय न हो। तिर्यंच भी बैटा बैटी पैदा करते है मगर उन की कोई किम्मत नहीं। यदि मानव ने अपने पुत्र को सुशिक्षित न बनाया तो केवल पशु की तरह उन का भी जीवन निरर्थक ही है। इसलिये माता पिता का सर्व प्रथम यह कर्त्तव्य है कि उम्र लायक होने पर अध्ययन के लिये योग्य प्रबंध करें। शिक्षा द्वारा ही जीवन समुन्नत बनता है कहा है कि—

शिक्षा विना कोई कभी, बनता नही सत्पात्र है।
शिक्षा विना कल्याण की, आशा दुराशा मात्र है ॥१॥

इसी तरह राजा ने भी अपने दोनों पुत्रों को पढाने के लिये पण्डितजो को सौंप दिया। नीती में लिखा है कि–पहली अवस्था में जिसने विद्याध्ययन नहीं किया, दूसरी अवस्था में जिसने धन नहीं कमाया, और तीसरी अवस्था में जिसने धर्म ध्यान नहीं किया, तो वह चौथी अवस्था में क्या कर सकता है ? यानि पहली पढने की अवस्था है उस में खुब पढ लेना चाहिये। दूसरी धन कमाने की अवस्था है इस में जितना भी वने उतना धन इकठा कर लेना चाहिये। तीसरी धर्म करने की अवस्था है. इस में धर्म करणी द्वारा पर भव का भाता पूरा तैयार कर लेना चाहिये। चौथी अवस्था में इन्द्रियाँ कमजोर हो जाती है. शारीरिक शक्ति घट जाती है। आंखों की रोशनी कमजोर पड़ जाती है, श्रवणेन्द्रिय वधिर हो जाती है। मुख के दान्त पड़ जाते है। और मुंह में से लाले टपकने लग जाती है। ऐसी दशा में न तो धन कमा सकता है और न धर्म ध्यान कर सकता है। इसलिये योग्य अवस्था के अनुसार ही मानव को काम कर लेना चाहिये जिस से पश्चत्ताप का मौका ही न आवे।

उस विशाल कुल में समुत्पन्न व्यक्ति की भी कोई शोभा नहीं, जिस ने कि विद्या प्राप्त न की। विद्या विहीन मानव पद पद पर पराभव पाता रहता है। भले कुल हीन भी क्यों न हो, मगर विद्यावान की जगत में खुब पूजा होती है, विद्वानों की सर्वत्र पूजा होती है। राजा तो केवल अपने ही देश में पूजनीय है। इसलिये मनुष्य की शोभा विद्या गुण से है न कि व्यक्ति-विशेष से। उम्र से भी कोई प्रयोजन नहीं है। किन्तु छोटी उम्र भी क्यों न हो मगर विद्या वाला ही पूजा जाता है।

पिताजी के आदेश के अनुसार दोनों कुमार पण्डितजी के

पास रात दिन विद्याध्यन करते हुए थोडे हि दिनों में सब कला में परिपूर्ण हो गये। राजकुमार के योग्य सब कलाएं स्वाधीन कर ली। फिर भी अध्यन को नहीं छोडते है। क्योंकि नीतिकार ने कहा है कि तीन बातों में सदा संतोष मान लेना चाहिये। और तीन बातों में कदापि संतोष नहीं करना चाहिये। स्वस्त्री में भोजन में और धन में संतोष, रखना चाहिये। और दान देने में. पढने में और तपश्चर्या में संतोष नहीं मान कर हमेशा करते रहना चाहिये। अर्थात् तीन मार्ग को सतत अपनाते रहना चाहिये गुण ही संसार में पूजनीय है, बडे बडे आडोम्बरों से ज्यादा पूजा नहीं हो सकती, हां, इतना जरुर है कि आडम्बरो को देख कर भले ही थोडी देर प्रजा भ्रम में पड़ जाय. किन्तु वास्तव में पोल खुलने पर प्रजा तिरस्कार तो जरुर करेगी, क्योंकि आखिर सचाई छीप नहीं सकती, दुध रहित गाय के गले में मधूर ध्वनि वाली घंटा बांध दी जाय तो भी उसे कोई नहीं खरीदता, और दुधाली गाय को विना घंटा ही खरीद लेगा। इसी तरह दोनों कुमार गुणों की तरफ लक्ष्य देते हुए युवावस्था में आरुढ हो गये।

नौ जवान पुत्रों को देख राजा ने विवाह के लिये कन्या की शोध खोल करने के लिये चतुर कर्मचारियों को अच्छी शिक्षा दे चारों दिशाओं में भेज दिये कर्मचारी भी स्वामी के कार्य को सम्पादन करने के लिये अपनी अपनी दिशा में रवाना हो गये।

इधर मालव देश में धारा नाम की नगरी में प्रतापसिंह नाम का राजा राज्य करता था। उनके बहुत पुत्रों के ऊपर पैदा हुई एक सुन्दर कन्या थी, रुप लावण्य में अप्सरा के समान थी, स्त्रियों की चौसठ कला में भी वह पूर्ण थी उसको युवावस्था में आरुढ हुई देख राजा चिन्तित रहने लगा, इनके योग्य वर और

वर कहां मिलेगा ? जिस में सात वकार हो। वह वर उत्तम माना गया है। विभूति-ऐश्वर्य, विनय, विद्या, वित्त. वपु-पंचेन्द्रिय से परिपूर्ण निरोग शरीर, वय, और विज्ञान, यानि विशेष ज्ञान, जिस को कर्त्तव्याकर्त्तव्य का भान हो। इन सात वकार से सम्पन्न वर हो वही श्रेष्ठ कहा है। नीति में कहां है कि कन्या को सुकुल में देना, विद्या को सुपात्र में देना, शत्रु को व्यसन में डाल देना, और इष्ट मित्र को धर्म में जोड़ देना, इसलिये किसी भी प्रकार से मेरी कन्या को उत्तम कुलोत्पन्न वर को देना चहिये। इस प्रकार राजा प्रतापसिंह अपने मंत्री से सलाह करने लगा।

सविनय मंत्री ने निवेदन किया. हजूर ? मैंने सुना है कि राजगृह नगरी का अधिपति मन्मथ राजा के दोनों पुत्र बहुत गुण वान एवं कलावान है। दोनों कुमार बैल की जोडी की तरह राज-धूरा को खेंचने में समर्थ है। छोटा भी क्यों न हो मगर गुण से आदमी की पूजा होती है। पूर्णिमा के चंद्र का कोई दर्शन नहीं करता, लेकिन दूज के चंद्र को सारा संसार नमस्कार करता है। और देखने के लिये आंखे फाडते रहते है। राजा के दोनों कुमार बडे चतुर है। यदि आप की इच्छा हो तो कन्या को स्वयं-वर के लिये वहां भेज दी जाय। मेरे ख्याल से तो सब से श्रेष्ठ यही मार्ग है।

मंत्री के वचन राजा को अत्यंत प्रिय लगे, राजा ने कहा, मंत्रीजी ? ऐसा ही किया जाय। विवाह के योग्य सब सामग्री तैयार करो, और ज्योतिषियों के द्वारा प्रयाण का मुहूर्त्त जल्दी से निकलवा दिया जाय। राजा का आदेश. देरी क्या ? मंत्री ने सब सामान इकठा कर दिया, ज्योतिषियों के द्वारा प्रयाण का दिन भी मुकरर कर दिया।

कन्या पिताजी के आदेशानुसार वहां जाने के लिये तैयार हो गई। सब शृंगार सज्ज धज कर रथ में बैठ गई, मंत्रीश्वर वगैरह चतुरंगी सेना साथ में। शम और साहस का भंडार, दया और दान की खान, गाम्भीर्य में समुद्र के समान, धीर में मेरु के समान, बाणावली में अर्जुन के समान रूपसेन के नाम से कन्या बड़ी प्रसन्न हो गई। सखि सहेलियों से आनंद की बातें करती हुई रास्ते को काटती थी। थोडे हि दिनों के पश्चात् राजगृही नगरी के बहार उद्यान में सब पहुँच गये। तंबू लगा दिया। सब उस में रात्रि विश्राम लेने लगे। मानव भले विश्राम खाने बैठ जाय। मगर भाग्य ढाई कदम आगे बढता है। वह न तो सोता है और न विश्राम लेता है। नगर में हवा फैल गई कि रूपसेन के लिये धारानगरी से राज कन्या स्वयम्वर के लिये आई है। सारी नगरी में जहां तहां यही चर्चा का विषय हो गया।

राजधानी में भी बात पहुंच गई, राजा ने मंत्री को कहा, जाओ, कौन आये है, तलास करो और सब तरह से राज्य की ओर से इन के लिये प्रबंध करो। मंत्री वहां से रवाना हो घर चला गया. सोचा, सुबह जाकर के तलास करेगें। क्योंकि अपरिचित व्यक्ति के यहां रात को जाना अच्छा नहीं है। सो गया, सुबह उठते ही उद्यान में जाने की तैयारी करता है, इतने में तो धारानगरी का मंत्रीश्वर उषा के समय ही मंत्री के घर पहुंच गया, दोनों मंत्री मंत्री बडे प्रेम से मिले, मंत्री ने मंत्री को संक्षेप में सब बातें कह सुनाई। दोनों मंत्री राजसभा में जाने के लिये खडे हो गये।

राजा दरबार भर बैठा था। राजपुरोहित, कर्मचारी वगैरह से दरबार दबादब भरा हुआ था, सब मंत्री की प्रतीक्षा कर रहे

थे। आज मंत्री इतना विलम्ब से क्यों? सब की उत्सूकता बढती जा रही थी। इतने में धारानगरी के मंत्रीश्वर को साथ में ले मंत्री ने सभा में प्रवेश किया। ज्यों ही मंत्री ने प्रवेश किया त्यों ही सब की दृष्टि साथ के मंत्रीश्वर पर स्थिर हो गई। विदेश के मंत्री ने राजा को प्रणाम किया, और साथ में लाई हुई भेट को राजा के सामने रख खडा रहा। हजारों आदमियों के बीच एक वक्ता जैसे भाषण देने लग जाता है ठीक वैसे ही उस मंत्री ने खडे खडे ही अपना परिचय तथा आने का उद्देश राजा को सब के समक्ष कह सुनाया, यह सुन सब खुश खुश हो गये, राजा ने भी आगन्तुक मंत्री का अच्छा स्वागत किया और रहने के लिये सुन्दर महल सुपुर्द कर दिया। जिस में राज कुमारी मंत्री सेना सब के सब शान्ति पूर्वक रहने लगे और मुहूर्त्त की प्रतीक्षा करने लगे।

राजा ने अच्छे ज्योतिषियों को बुलाये; वे भी राजा के निमंत्रण पर गेंद की तरह फूल गये. सुन्दर वस्त्र, और यज्ञोपवीत धारण कर, तिलक छापा शरीर पर लगा कर, बगल में पुस्तक तथा पंचांग ले राजसभा में समय पर पहुंच गये। राजा को सुन्दर आशीर्वाद देकर संस्थापित आसन पर पंडितजी बैठ गये। राजा ने कहा पण्डितजी? आज विशेष काम के लिये निमंत्रण दिया है, आप लोग सब इस विषय के जानकार हैं। इसलिये बढिया दिन हो यह रूपसेन के विवाह के लिये देखिये। जहां तक हो जल्दी आवे तो और भी अच्छा रहेगा।

सब ज्योतिषियों ने अपना अपना पंचाग उठाया। वर कन्या मेलापक चक्र वगैरेह देखने लगे। काफी देर तक अपनी अपनी बुद्धि के अनुसार देखने के पश्चात् परस्पर शंका समाधान करते हुए एक ही निर्णय पर सब आ गये। इस कन्या के साथ

रूपसेन का लग्न करना कथमपि उचित नहीं है। ऐसा भी ज्योतिष में बताया है कि यदि कन्या की जन्म कुंडली में मौरिया मंगल पडा होतो वर की मृत्यु हो जाती है। और यदि वर की जन्म पत्रिका में मगल पडा हो तो कन्या की मृत्यु हो जाती है। यदि दोनों क मंगल उस स्थान मे पड़ा हो तो श्रेष्ठ माना जाता है। दोनों में प्रेम भी पूर्ण रहेगा। झगडा रगड़ा का भी नाम निशान न रहेगा। यहां कन्या की कुंडली से पण्डितजी को ऐसा लगता था कि यदि रूपसेन के साथ विवाह इस कन्या का किया जाय तो रूपसेन का चौथे फेरे में ही मृत्यु हो जायगी। इस बात का पूरा विचार-विनिमय कर एकान्त में जा केवल राजा को ही इस बात की सूचना दे दी। और यह भी कहा महाराज! हमारी बात में जरा भी संदेह मत रखना।

यह सुन राजा के दिल में बडा धक्का लगा। हर्ष के बदले विषाद छा गया। राजा ने मंत्री को सब बातें कह सुनाई। साथ यह भी कह दिया। अब अपने को क्या करना चाहिये! क्योंकि प्रतापसिंह ने तो रूपसेन को योग्य समझ अपनी पुत्री को स्वयंवर के लिये भेजी है, यदि वापस रवाना करें तो अपनी शोभा में खामी आती है और उन के साथ वैर भाव हो जाता है, फिर वह जीन्दगी पर्यन्त अपने से बदला लेने की सोचता रहेगा। इसलिये अब यहां कोई बुद्धि लडाईये जिस से कि अपने को कोई मार्ग मिल जाय। क्योंकि बुद्धिमानों के लिये संसार में कोई असाध्य और आगम्य मार्ग नहीं है। उन के लिये अनेक रस्ता है। बुद्धि हीन के लिये संसार शून्य है। मगर बुद्धि मान छोटा पुरुष भी बुद्धि के बल पर बडा काम कर सकता है और संसार में वह बड़ा कहला सकता है। इसलिये तुम पूरे बुद्धि मान हो यहां कोई उपाय बता कर अपनी प्रतिष्ठा की रक्षा करो।

स्वबुद्धि से गहरा सोचने के अन्त में मंत्री ने कहा। महाराज ! यदि हो सके तो एक मार्ग है। इस कन्या को रूपसेन के बदले रूपराज को परणा दी जाय। वापस कन्या को भेजना तो सर्वथा अनुचित है। राजा को भी यह बात जच गई, उन्हीं ज्योतिपियों को फिर से पूछा।

वे भी रूपराज के साथ कन्या का मेलापक चक्र वगैरेह देख कर बोले, महाराज ! इस कन्या के साथ रूपराज का मिलाप बडा अच्छा है। सब से श्रेष्ठ योग पड रहे हैं। और विवाह का अमुक दिन अच्छा है। ऐसा कह कर ज्योतिपि सब रवाना होने लगे। राजा ने भी समयोचित्त उन्हें भेट पूजा देकर रवाना कर दिया।

राजा ने धारानगरी के मंत्रीश्वर को बुलाकर सब बात कह सुनाई, वह भी राजकुमारी से परामर्श करने के लिये उस के महल में चला गया। राज कन्या से परामर्श कर रूपराज के साथ विवाह का निर्णय कर लिया। होनहार होकर ही रहता है उसे कोई मिथ्या नहीं कर सकता। सूर्य पूर्व में उदय होता है। संभव है कभी पश्चिम में हो जाय ! मेरु पर्वत अचल है, संभव है कभी चलायमान हो जाय ! आग सदा उष्ण है संभव है कभी शीतल बन जाय ! फिर भी पूर्व कृत कर्म कदापि चलायमान नहीं होते। जो भी कर्म प्रेरणा देता है वैसे ही मानव प्रवृत्ति करता है, कर्म को शर्म नहीं है। वह राजा को रंक, और रंक को राजा बना देता है, कर्म के मारा मानवी नाचता है तो फिर इस में सोचने की क्या बात है ? मेरी इच्छा रूपसेन के साथ लग्न करने की थी मगर कर्म को मंजूर नहीं है, मेरे बस की कोई बात नहीं है। कर्म में रूपराज लिखा है तो रूपसेन कहां से मिले ? इतना तो

मुझे संतोप है कि राजधानी तो वही है और सुसराजी भी मन्मथ राजा ही है। इसलिये मंत्रीश्वर आप जाकर के विवाह का निर्णय कर लीजिये मेरी सन्मति है।

इस प्रकार राजकुमारी के वचन सुन मंत्री बड़ा प्रसन्न हुआ, और उसी समय लग्न का दिन निर्णय कर लिया गया और दोनों तरफ लग्न की शानदार तैयारियां होने लगी।

राजकुमारी के महल को चारों ओर से सजा दिया, सुन्दर पंडाल की रचना करवाई, जिस में वर वधू बैठ कर विवाह करेगें। धवल मंगल के गीत से नगर गूंजने लगा, मंत्री ने शानदार विवाह के लिये सब साधन जोड़ दिये। राजकुमारी तो सखियों के साथ विनोदमय समय को निकालती है। यहां पिताजी के स्थान पर मंत्री ही सब काम काज करता है।

उधर राजा ने सब तैयारियां करवा दी, नियत मुहूर्त्त के समय रूपराज घोड़े पर चढ कर विवाह के लिये शानदार जान पूर्वक कुमारी के महल के द्वार पर पहुंच गया। गोधूली समय में वर कन्या चवरी में जा बैठे। राज पुरोहित ने कहा, वर कन्या सावधान !!! यह सुनते ही दोनों खडे होते ही चार गति में रुलने के लिये चार फेरे फिर गये, प्रेम के सूत में सदा के लिये बंध गये। विवाह विधि सम्पन्न होने पर वर वधू को नियत स्थान पर पहुंचा दिये। जहां वे दोनों बैठ मस्तानी भरी .... बातों में समय निकालने लगें।

रूपराज के साथ कन्या का विवाह हो जाने के कइएक दिनों के बाद धारानगरी के मंत्रीश्वर को तथा उनके कर्मचारियों को खुब वस्त्र आभूषण वगैरह से सत्कार करके राजा मन्मथ ने

विदा कर दिया। मंत्रीश्वर भी राजकन्या से प्रेम पूर्वक बातें कर उन की आज्ञा ले अपनी नगरी की तरफ रवाना हो गया। राजकुमारी सुसराल में रूपराज के साथ आनंद से समय काटती है।

राजगृही नगरी में तरह २ की बातें चलने लगी। दुनियां दो रंगी हैं, गलतफेमी भी हो सकती है, मगर विना जाने बुझे किसी चीज को प्रकाश में लाना ठीक नहीं रहता है। लेकिन कौन किस को पूछे? पूछने की फुरसद कहां? यूं ही गप्प गोला चलना शुरू हो गया, किसी ने कह दिया। भाई? क्या कहूं? बडा अनर्थ हो गया। अरे? तुमने भी सुन लिया होगा! राजा ने बडे पुत्र को छोड़ छोटे के साथ कन्या का विवाह करवा दिया, इस से क्या समझना चाहिये। रूपसेन में बडे २ अवगुण होने चाहिये। यद्यपि पिता के सब पुत्र समान हैं, फिर भी बडे को छोड़ छोटे को परणा देना यह तो बडे अनर्थ की बात हो गई। भले एक बाप का दो बेटा हो मगर गुणों में फर्क जरुर होता है। इसलिये गुणों में रूपराज ज्यादा दीखता है और रूपसेन अवगुणों का भंडार दीखता है। जिस से उन का विवाह नहीं किया। एक कवि ने ठीक ही कहा है।

एक आम्बो ने आकडो, बिहु सरिखा फल होय।
पण आकड अवगुण भर्यो, हाथ न झाले कोय॥

इसलिये रूपसेन में कोई न कोई गुप्त अवगुण जरुर है, इस प्रकार की चर्चा नगरी में जगह जगह होने लगा। अचानक रूपसेन का बाजार में निकलना हुआ। और ये बाते स्वयं अपने कानों से सुन ली, सुनते ही रूपसेन आग बबूला हो गया। और हृदय में अपार वेदना का अनुभव करने लगा। उसी समय राजमहल में न जाकर अपने मित्र के पास गया और नगरी की सब

बातें कह सुनाई। और यह भी कह दिया। भाई! पिताजी ने तो मेरा भला चाहा, उस कन्या के साथ विवाह करते तो मौत हो जाती, इसलिये मेरा लग्न न कर भाई के साथ लग्न किया। लेकिन लोक तो उल्टी उल्टी बातें उडा रहे हैं जिस से दिल में बडा आघात लग रहा है। जी चाहता है कि उन लोगों को कुछ शिक्षा करुं ?

यह सुन मित्र ने कहा भाई ? प्रजा के साथ कलह करना तेरे लिये अनुचित है। क्योंकि लोगों के मुख पर पटा बांधने में कोई समर्थ नहीं है। "हाथी चाले बजार, कुत्ता भूसे हजार,. इस कहावत को याद रखनी चाहिये जिस से तेरा कुछ भी नहीं बिगडता।

तुच्छ आदमी तो हमेशा निन्दा ही किया करता है, आदत्त से व्यक्ति लाचार हुआ करता है, हाथी के माथे पर काग विष्टा कर चला जाय तो क्या हाथी उस को गाली देता है ? अथवा उसे मारता है ? बड़े आदमी हमेशा गंभीर हुआ करते है, तुम को भी गंभीर बनना चाहिये।

समुद्र के पानी को रोकना सहज है, सिंह को पिंजरे में पूरना कोई बडी बात नहीं है, किन्तु दुर्जन की जीबान को बांधना अत्यंत कठिन ही नहीं अपितु सर्वथा असंभव है। निन्दक आदमी सब से बूरा है। माता तो पुत्र का मल हाथ से साफ किया करती है मगर दुष्ट आदमी तो जीभ से मल साफ करता है। ऐसा कोई देश नहीं, ऐसा कोई शहर या गांव नहीं, जिस में कि एक दो व्यक्ति खराब आदत के न मिले ? लेकिन सज्जन को चाहिये कि दुष्ट को भी प्रेम से जीतने की कोशिश करें। जिस से एक दिन उस की प्रवृति में कुछ न कुछ तो अवश्य फर्क पडेगा।

इसलिये हे कुमार ? तुम को प्रजा पर क्रोध नहीं करना चाहिये। क्योंकि अनभिज्ञ प्रजा है, यों ही वातें करती है। "नवी वात नौ दिन खांची ताणी तेरा दिन" आखिर प्रजा इस वात को भूल जायगी, तुम निश्चिंत रहो, घबराने की कोई जरुरत नहीं है। केवल धैर्यता धारण करने की आवश्यकता है, अच्छा, अब तुम जाओ, ऐसा कह कर कुमार को अपने घर की तरफ रवाना कर दिया। जाते हुए फिर से कह दिया कि तुम शान्ति से रहो।

रूपसेन सीधा अपने महल में जा एकान्त बैठ आत्म चिन्तवन में उतर गया। जब तक मैं यहां रहूंगा तब तक लोक मेरी हँसी उड़ायेगें, और व्यर्थ की लोक निन्दा करेगे, यद्यपि मेरे में दोष नहीं है फिर भी दुनिया यों ही अवगुणों का प्रचार करेगी, इसलिये किसी भी प्रकार से यहां रहना मेरे लिये अच्छा नहीं है, क्योंकि यहां रहने से मेरी प्रतिष्टा कम होगी। मान ही बडे पुरुष का धन माना है। यह तो मेरा यहां खत्म हो जायगा। फिर तो जिन्दगी ही बेकार है। "कीर्ति यस्य स जीवति" जिसकी कीर्ति है वही जिन्दा है। यहां तो कीर्ति पर पानी फिर रहा है। सब से श्रेष्ठ मार्ग यही है कि थोडा दिन देशाटन करुं, जिस से देश देखना होगा, चतुराई सीखी जायगी, बुद्धि का विकाश होगा और साथ भाग्य की भी कसौटी हो जायगी। सिंह, सत्पुरुष और हाथी इन की शोभा स्थान छोडने पर ही हुआ करती है, हंस तो जहां तहां शोभा देता है ! तो क्या मनुष्य की शोभा नहीं होगी ? यह भी सुन्दर मौका हाथ लग गया है अपने भाग्य की परीक्षा करने का। इस अवसर को खो देने पर शेष पश्चात्ताप ही रह जायगा। ऐसा मानसिक सोच कर रात्रि के समय अकेला ही महल से चूप चाप नीचा उतर गया। कमर पर कटार और हाथ में तलवार लिये हुए रूपसेन कुमार को थाते देख द्वार पाल ने रोक ही दिया।

कुंवर साहब ? इस समय कहां पधार रहे है ? जाने का कारण बताओ ? और राजा की आज्ञा है या नहीं ? सच कहो।

रूपसेन ने विचार किया, द्वारपाल तो राज नौकर है। इस को पूछने का अधिकार है। मगर व्यर्थ की माथा कूट में पड़ गया तो सूर्योदय हो जायगा। और फिर जाना भी असंभव हो जायगा ! 'द्रव्येण सर्वे वशाः" धन से सब वश में हो जाता है। अपने भी इसी नीति का सहारा लेना चाहिये। जेब में से एक स्वर्ण मौर निकाल द्वार पाल के हाथ में रखते हुए कहा। यह तो परवाना है और एक पवन वेग घोडा जल्दी से जल्दी ले आवो, विलम्ब मत कर, मुझे कुछ काम के लिये बाहर जाना है। याद रखना, मेरे जाने की बात किसी को मत कहना। बिचारा द्वारपाल तो मौर देख कर नाचने लग गया, उसी समय सुन्दर घोड़ा लाकर के कुंवर को सौंप दिया। पैसे से सब का जी चलायमान हो जाता है सारा जगत पैसे के पीछे पागल बना हुआ है, जिस में द्वार पाल पागल बनें उस में कोई बडी बात नहीं है। कुंवर को घोडा पर बैठा कर गूप चूप द्वार बाहर निकाल कर द्वारपाल वापस सो गया। कुंवर ने भी शान्ति का दम लिया।

घोडे पर चढ़ कर के रूपसेन नदी नाला पहाड तथा भयंकर जंगलों को पार करता हुआ आगे बढने लगा, भयावह अटवी के बीच अचानक एक भव्य मंदिर देखने में आया, इतने निर्जन वन में मंदिर कहां से आया ? आश्चर्य चकित भाव से नीचे उतर कर मंदिर में प्रवेश किया, सुन्दर नीलवर्ण की पारस प्रभु की मनोहर प्रतिमा का बडे भाव से दर्शन किया। चैत्यवंदन किया। सुन्दर राग रागीणी मय स्तवन बोला, फिर से आगे बढा। बराबर सोलह घंटे तक घोडे पर चलता ही गया। घोडे की चाल

भी मंद पडने लगी। रूपसेन ने सोचा, घोडा थक गया है। अपने को भी भूख प्यास लगी है। इसलिये कही विश्राम करे जिस से घोडा का थकान भी उतर जाय और अपनी भूख भी मिटा देना है। इतने में सघन वन आ गया। घास फल फूल वगैरह भी उस में खुब थे। तुंगगिरी के समीप आम्बे के झाड़ के नीचे कुंवर विश्राम करने लगा घोडा चारा चरने लगा। फल फूल लाकर के रूपसेन ने भी पेट भर लिया। रास्ते की थकावट एवं भर पेट फल फूल खाने से सोते के साथ रूपसेन निद्रा देवी की गोद में लोट पोट हो गया।

पीछे राजधानी में क्या लीला होती है? जरा उस को भी देख लेना चाहिये।

जिस निशा में रूपसेन राजमहल से निकला था। उस समय केवल राजधानी के लोग ही नहीं बल्कि सारा गांव नींद में पडा हुआ था। किसी ने रूपसेन को न देखा। द्वार पाल तो जानता हुआ भी अनजान बन गया। उषा के समय सब लोग उठ गये। मगर रूपसेन अभीतक नहीं उठा। यह समाचार राजधानी में चहल पहल करने लगा। दास दासी दौडा दौड़ कर राजकुमार के महल को ढूंढने लगी, मगर न तो रूपसेन है, न रूपसेन की तलवार, और न उनके आभूषण ही है। राजा के कानों तक यह आवाज पहुंचा दी गई। एकदम राजमहल में कोलाहल मच गया, राजमहल का प्रत्येक मकान, दोस्त-मित्रों के मकान, और भी जहां २ संदेह था सब जगह तलाश करवाई लेकिन उनका पता न मिला सो न मिला। पहाड़ गुफाएं रास्ता वगैरह सब ढूंढ लिया।

ढूंढते २ मध्याह्न का समय हो गया। न तो राजा खाता

है और न राणी। न राजकर्मचारी और न मंत्रीश्वर। सब के सब चिन्तित दशा में बैठ गये, इतने में नगर के मुख्य व्यापारियों ने राजा से करबद्ध निवेदन किया। हजूर ? भोजन कर लीजिये। तलाश चालु है। पता लग जायगा। आखिर ज्यों त्यों समझा-बुझा कर के अनिच्छा से भी कुछ नास्ता करवा दिया। मगर राजा को पुत्र के विना चेन कहां ? उसी समय अष्टांग निमित के वेत्ताओं को बुलाया, और पूछा। रूपसेन किस दिशा में गया है ? और वापस कब हमें मिलेगा ?

भविष्यवेत्ताओं ने खुब खुब मनोमंथन किया। परस्पर विनिमय किया, और राजा से कहा हम लोग कल इस का समुचित जवाब देंगें, ऐसा कह कर सब अपने २ घर चले गये।

रातभर पुस्तकों के पन्ने उल्ट पुल्ट करते करते थक गये गणित तथा फलादेश का खुब जीणवट से निरीक्षण किया। प्रातः विधि से निवृत्त हो सब के सब राजसभा में पहुँच गये राजा को एकान्त में बुला कर निवेदन किया महाराज! हम लोग कुंवर की बात कहना नहीं चाहते है। और आप को भी इस विषय में मौन लेना ही उत्तम है, अन्यथा खेद पैदा होगा। इसलिये आप सर्वथा इस बात को दिमाग से निकाल दीजिये।

इस तरह मार्मिक शब्दों को सुनते ही राजा मूर्छा खा कर जमीन पर ढल गया। दास दासियों ने शीतल हवा का उपचार जारी किया, क्षण भर के बाद स्वस्थ होने पर मंत्री ने राजा से कहा हजूर! घबराइये नहीं। ज्योतिषियों की बात पर विश्वास न करिये। ठहरिये, मैं जैनाचार्य महाराज को बुलाने के लिये भेजता हूँ। क्योंकि वे स्पष्ट वक्ता होते है किसी से पक्षपात भी नहीं रखते है वे सही बात बतायेगें। ऐसा कह कर प्रधान कर्मचारी को

आचार्य भगवान को लेने के लिये भेज दिया वह भी उसी समय आचार्य देव के पास पहुँच गया और राजा का निमन्त्रण दिया आचार्य भगवान भी राजमहल में पधार गये, राजा ने रूपसेन का सब वृत्तान्त ज्ञात करते हुए यह भी कहा भगवान ! पुत्र पुनः कब लौटेगा ? यह फरमाइये । आचार्य भगवान ने उत्तर में इतना ही कहा कि मैं कल प्रत्युत्तर दूंगा, ऐसा कह कर आप धर्म स्थान पर पुनः पधार गये और पद्मावती देवी की साधना में बैठ गये। आचार्य देव का मनोबल बड़ा मजबूत था, साधना एका प्रचित्त से कर रहे थे रात में ही पद्मावती ने कहा मुझे क्यों याद किया है। क्या काम है ! आचार्य भगवान ने कहा रूपसेन कुमार का क्या समाचार है ? और कोई काम नहीं है।

पद्मावती ने कहा राजा को कह देना, तेरा पुत्र रूपसेन स्त्री पुत्र विशाल सेना सहित बारह वर्ष के बाद अपने आप तेरे घर आजायेगा, चिन्ता करने की कोई जरूरत नहीं है। वह आनन्द में है। ऐसा कह कर देवी अदृश्य हो गई। आचार्य भगवान ने देवी का उक्त वचन राजा को कह सुनाया। और आश्वासन भी दिया, राजन ! देवी का वचन मिथ्या नहीं होगा, अवश्यमेव पुत्र आजायगा। ऐसा कहने के पश्चात आवश्यक कार्यवश आचार्य भगवान ने वहां से विहार कर दिया।

आचार्यदेव के वचन पर राज परिवार को बड़ा संतोष हुआ मगर खेद भी कम न था चूंकि बारह वर्ष के पश्चात् पुत्र प्राप्त होगा इतने दिन कैसे निकलेंगे। राजा के हृदय में बड़ा आघात लगा उसने राजसभा में जाना भी बन्द कर दिया। गुणवान पुत्र के बिना सभा की शोभा भी क्या ? एक सुगंधित वृक्ष सारे जंगल को सुगंधमय बना देता है ठीक वैसे एक ही पुत्र से सारे कुल की शोभा है, इसी रूपसेन के प्रताप से मेरे

राज्य की चारों तरफ कीर्ति फैल गई, उसी का यह प्रभाव है कि स्वयम्वर के लिये भी कन्या आई। इत्यादि मानसिक संताप से संतप्त राजा पुत्र के कल्याण के लिये देवी देवताओं की मान्यता करने लगा। यह भी एक कहावत हो गई है कि दुःखी देवताओं को मानता है, सुख में कोई याद भी न करें।

दुःख में समरण सहु करे, सुख में करे न कोय।
जो सुख में समरण करे, तो दुःख न आवे कोय॥

राजा भी अनेक प्रकार से देवताओं की बाधा रखता था, फिर भी उन्हें पूर्ण संतोष न था, हरएक भविष्य वेत्ता से तथा राहगीर से रूपसेन के लिये पूछता ही रहता था मन से जरा भी उसे न भूल सका, इसी तरह चार छ मास व्यतीत होने पर मंत्री के अत्यन्त आग्रहवश राजा राजसभा में आने लगा, धीरे धीरे शोक शान्त होने लगा और राजा काम काज में पूर्व की भांति जी लगाने लगा और शान्ति का साम्राज्य वढने लग गया।

उधर रूपसेन नींद लेकर उठ-गया पानी पीकर के घोड़े पर चढ बैठा, चलते चलते दो तीन माईल की दूरी पर गया होगा, इतने में एक बूढा ब्राह्मण मिला, हाथ में लकड़ी थी, आंख की रोशनी नाम मात्र शेष थी, किन्तु लोभ के वश में होकर गांवों गांव घूमता था चाहे अंग गल जाय, दांत गिर जाय, बाल सफेद बन जाय, शरीर की शक्ति सर्वथा क्षीण हो जाय मगर आशा तृष्णा कभी नहीं मिटती। वह तो दिन दिन जवानी का रूप धारण करती रहती है। ब्राह्मण भी आशा के मारा इधर उधर भटकता रहता था। आशा नाम के दो अक्षरों में अपूर्व शक्ति भरी है मानव को आगे वढने के लिए अपार प्रेरणा देती है, उत्साह हीन मानव में भी आशा उत्साह का पवन भर देती है

मानव इसके सहारे आगे बढने लग जाता है, बूढा ब्राह्मण भी बढता जा रहा था बूढ़े ब्राह्मण को देख कुमार ने प्रणाम किया। उसने भी सुन्दर आशीर्वाद दिया "चिरायु भव"। ब्राह्मण ने रूपसेन को देखते ही पहचान लिया, चूंकि कई बार बूढा राजधानी में आगया था और युवराज रूपसेन को अच्छी तरह जानता था। कुमार ने भी ब्राह्मण को पहिचान लिया, इससे कुमार ने ब्राह्मण को पूछा, पण्डितजी इस गहन वन में आप का कहां से आना हुआ! और आगे किधर जा रहे है?

ब्राह्मण ने कहा भाई! चौथा कपाय के उदय से भटक रहा हूँ वास्तव में ब्राह्मण ने सत्य बात कह दी। चौथा कपाय यानि लोभ के मारा आ रहा हूँ. मैंने सुना है कि मन्मथ राजा के पुत्र का विवाह होने जा रहा है, इसलिये वहां दक्षिणा के लिये जाना चाहता हूँ। चूंकि हम लोग भूदेव है जहां लड्डू मिलता हो तो हमारे लिये पांच योजन कोई दूर नहीं है और यदि दहीवड़ा मिलता हो तो दस योजन भी कोई दूर नहीं है। इसलिये विवाह के उपलक्ष में दक्षिणा लेने जा रहा हूँ।

कुमार ने कहा, तब विलम्ब न करें, जल्दी पधारें। ब्राह्मण ने कहा, घर पर विवाह हो रहा है वो तुम इस समय कहां जा रहे हो! लग्न का प्रसंग छोड़ना तो अच्छा नहीं है सच बताओं कहां जा रहे हो।

कुमार ने कहा, कर्म की प्रेरणा से देशाटन करने जा रहा हूँ दूसरा कोई कारण नहीं है।

बूढ़े ने कहा, नहीं नहीं हरगिज नहीं इसमें कोई न कोई कारण जरूर है, मालूम होता है कि तुम घर से क्रोध करके आये

हो ! तुम्हारे जैसे चतुर कुमार के लिये लड़ाई करना अनुचित है चलो वापस चलो मेरे साथ चलो आगे मत बढो। क्रोध बहुत बुरा है, तुम क्रोध के आवेश में ही मुँह लेकर के कहीं भाग रहे हो। कुमार ! याद रखो, क्रोध सब को संताप कराने वाला है, क्रोध ही वैर का कारण है, क्रोध दुर्गति में पटकने वाला है और स्वर्ग तथा अपवर्ग का द्वार बन्ध करने वाला ही यह क्रोध है इसलिये सर्वथा क्रोध का परित्याग कर और वापस चल।

इस प्रकार ब्राह्मण के बहुत कुछ समझाने पर भी वापस जाना नहीं चाहा, तब ब्राह्मण ने फिर से कहा कुमार ! विदेश बड़ा दुष्कर है, तुम सरल हो इसलिये आगे नहीं जाकर वापस लौट जाओ।

कुमार ने कहा पण्डितजी ! बुद्धिमानों के लिये कोई विषम नहीं है समर्थ को क्या भार लगे ! व्यापारी को क्या दूर है ! सद् विद्यावालों के लिये विदेश क्या ? और मीठा बोलने वालों के लिये शत्रु कौन ! इसलिये मुझे विदेश कोई कठिन नहीं लगता है आप तो मुझे कनकपुर जाने का मार्ग बता दीजिये, मेरी वहां जाने की भावना है।

यह सुन पण्डितजी ने कहा यह मार्ग तो अत्यन्त विषम है और इस में भय बहुत है इसलिये इस मार्ग को छोड़ किसी दूसरे रास्ते से जाना ठीक होगा। फिर तुम्हारी मरजी।

रास्ते में भय क्या है ! वह बताइये रूपसेन ने जिज्ञासा पूर्वक निवेदन किया।

पण्डितजी ने कहा सावधान पूर्वक सुनो ! यहां से थोड़े दूर जाने पर एक बड़ा वट वृक्ष देखने में आवेगा, उस वृक्ष की चारों

कुमार ने सोचा योगी सब छोप करके दूर बैठे है और भाग्य जोर दे रहा है, सुन्दर चार वस्तुएं विना परिश्रम मिल गई है हाथ में आई चीज को खो देना मूर्खता है। पवन पावडी पेर में पहर ली, दण्डा हाथ में ले लिया, पात्र तथा कंथा दोनों को पीठ पर बांध दिये फिर पवन पावड़ी को रुपसेन ने कहा हे पादुके ! मुझे कनकपुर शहर के उद्यान में ले जाओ उसी क्षण में पवन पावड़ी आकाश मार्ग में चलने लगी गगन मार्ग में जाते हुए रूपसेन ने एक दो तीन ताली बजाई, और कहा हे योगीन्द्रों ! मैंने तुम को बराबर कर दिया है। आप लोग अब खेद मत करना, सदा के लिये तुम्हारे विवाद को तोड़ दिया है। किसी को कुछ भी न देकर बिल्कुल समान बना दिया है, तो, अब आनंद में रहना। जाता हूँ फिर कभी मिलेंगे !

रूपसेन की ताली तथा आवाज को सुन सब लौट आये और देखा तो रूपसेन आकाश में दृष्टि से भी परे हो गया। सब योगी चिन्ता सागर में डूब गये, "अब पछतायां होत क्या, जब चिड़िया चुग गई खेत" सब पश्चाताप करने लगे, आपस में गुप चुप होने लगी, अपन चाहते थे कि वह अपने विश्वास में आ गया है तो स्वर्ण पुरुष बना लेंगे। किन्तु वह भी बडा धूर्त निकला। अपने को ही ठग करके आबाद चला गया। सारी जिन्दगी की मेहनत पर पानी फिर गया। अपन कुछ और ही सोच रहे थे परन्तु भाग्य ने उल्टा करके बता दिया। ऐसे बोलते हुए सब के सब जोर जोर से रोने लग गये। एक ने हिम्मत पूर्वक कहा भाईयों ! रोने से अब क्या होगा ! उठो, और परिश्रम करो, जिससे और वस्तु की प्राप्ति हो जायगी। "हिम्मते मर्दां और मर्दे खुदा" क्यों घबराते हो ! चलो, कोई काम करें।

आखिर हताश होकर चारों और भीक्षा के लिये घूमने लगे अब यही जीवन का एक मात्र साधन रहा। एक ने कहा दूसरे को मारने मात्र की इच्छा की जिसका भी कितना बुरा परिणाम आया। कर्म की विचित्र घटना है शुभ अशुभ कर्म का फल भोगे बिना छुटकारा नहीं होता, अपने भी कुछ अशुभ का उदय हुआ, सब वस्तुएं खो दी। दूसरे ने कहा, अच्छा हुआ, वस्तुएं लेकर ही भाग गया। वरना याद है चार बाण मारने के लिये लाया था। जान बच गई, यही खुशी मनाओ। चलो, अब इन स्थान को छोडो; और अपने २ काम में लग जाओ, व्यर्थ इन चीजों को याद करने से अब कोई फायदा नहीं है। ऐसा विचार विनिमय कर सब योगी वड़ को छोड़ चारों दिशा में चारों निकल पड़े।

रूपसेन पवन पावड़ी के बल पर आकाश मार्ग से नीचे के नगर पहाड़ वगैरह अनेक प्रकार के कौतुक को देखता हुआ कनकपुर नगर के बहार किसी शुष्क बगीचे में जा उतरा! उसमें एक दो चार नहीं बल्कि सैकड़ों झाड़ में से सुन्दर चम्पा के झाड़ के नीचे जा विश्राम करने लगा, झाड़ सब सूके थे एक भी हरा भरा झाड़ दृष्टि में नहीं आया, कुमार ने सोचा, पवन पावड़ी की परीक्षा हो गई, अब डंडे की परीक्षा कर लेनी चाहिये क्योंकि यह मौका ठीक मिल गया है। ऐसा सोच सर्व प्रथम चम्पा के झाड़ के एक दो और तीन डंडे मारे उसी समय हरा भरा हो गया, यह देख कुमार ने फिर से गहरा सोचा, अपने पास साधन है, और बगीचा सूका है, सब के सब वृक्ष यानि सारा बगीचा ही हरा भरा क्यों न बनाया जाय? उठ, खड़ा हुआ, एक दो और तीन, एक दो और तीन, इस तरह प्रत्येक झाड़ पर जादुई डंडा मारना शुरु किया उसी समय सारा बाग नव पल्लवित हो गया। मानो

कि पृथ्वी पर नंदन वन ही उतर आ गया हो वैसी रमणीय शोभा उस बाग की हो गई। रूपसेन चंपा के झाड़ तले शान्ति से सो गया क्योंकि अब वह निश्चिंत दो बातों से था एक तो कनकपुर शहर आ गया और दूसरी अपूर्व चार वस्तुएं प्राप्त हो गईं। रास्ते की थकावट और ठंडी ठंडी हवा के कारण रूपसेन निद्रा देवी की गोद में मस्त हो गया!

यह बगीचा राज मार्ग पर था हजारों नर नारियों ने रास्ते में जाते आते इसको देखा, देख देख कर वहीं स्तम्भित हो जाते थे यह क्या मामला है? कल तो बिल्कुल सूका था और आज हरा भरा कैसे हो गया? दर्शक की वहां भीड़ा भीड़ होने लगी जैसे की मधू मक्खियां जमा हो गई हो! कई एक लोग दौड़ते हुए बगीचे के मालिक माली को कहने गये मगर माली भी इस बात को मानने को तैयार नहीं था। एक रात में यह कैसे सम्भव! वर्षा हो तो भी एक रात में लीलाछम न हो सकें। किन्तु उपरा ऊपरी लोक आ करके माली को कहने लगे। यह भी शंका में पड़ गया आखिर मामला क्या है? एक दो व्यक्ति झूठ बोल जाय! लेकिन इतने लोग तो झूठ न बोले, और इनको लेना भी क्या है? हां, इतना हो सकता है, यदि कोई देव वहां आया हो, तो सम्भव है नव पल्लवित उनके प्रभाव से हो जाय! फिर भी शंका का समाधान किये बिना चैन भी न पड़े। ऐसा सोच, माली ने मालण को कहा, तुम जा करके तलास करके वापस जल्दी आओ, बात क्या है!

माली के आदेश के अनुसार मालण बगीचे के निकट जा देखती है तो हजारों आदमी खड़े हैं। यह भी शंका में पड़ गई, क्या यह बाग मेरा है या किसी दूसरे का? तर्क-वितर्क दिल

से बगीचा में जा मालण चारों तरफ घूम घूम कर देखने लगी मगर एक भी सूखा झाड़ देखने में नहीं आया। फल फूल से भरे वृक्षों को देख बड़ी प्रसन्न हुई, आगे बढती हुई चंपा के पास जाकर देखती है तो कोई अपरिचित एवं महान् रूपवान व्यक्ति सोया हुआ है। उसे देख मालण का पग स्थिर हो गया। और मन से निश्चय कर लिया कि अवश्यमेव इसी पुरुप के प्रभाव से मेरा बाग हरा भरा हुआ है। इसमें कोई शक नहीं, यह महान् पुण्यवान जीव है, इसी भाग्यवान के चरणारविन्द का ही यह परिणाम है। भाग्यवान पुरुप जहाँ भी जाय वहाँ सब को निहाल कर देते हैं, सम्पदा भी अनायास उपलब्ध हो जाती है। इस दिव्य पुरुष के असीम प्रताप से मेरा बाग सुन्दर शोभा सम्पन्न बन गया है, अब इनकी भक्ति करना मेरा फर्ज ही नहीं बल्कि परम धर्म है। ऐसा चिन्तवन कर मालण गुलाब चम्पा मोगरा वगैरह पचरंगी पुष्पों का सुन्दर हार बना कर कुमार के उठने की प्रतीक्षा में उसी के पास बैठ गई।

अङ्ग को मरोडते हुये, आंखों को मसलते हुए, जंभा लेते हुए रूपसेन उठ, बैठा हुआ, सामने अपरिचित औरत बैठी थी उस पर दृष्टि पड़ते ही चमक गया, यह फिर कौन! इतने में तो वह भी खड़ी होकर कुमार के सामने आई और कुमार के गले में स्वविरचित हार डाल दिया. कुमार ने हार पहनाने वाली बाई को एक स्वर्णमोर दे दी, उस को हाथ में ले मालण ने कहा, आप कोई विचार न करें, मैं इस बगीचा की मालिका हूँ, आपके पूत चरणारबिन्द से मेरी बाड़ी हरी भरी हो गई है अब आप घर को भी पावन करो, पधारने की कृपा करो, भोजन का समय भी हो रहा है।

कुमार ने सोचा, यह सब दान का प्रभाव है, दान किसो

भी अगह दिया हुआ खाली नहीं जाता है, यह मालण है, आमंत्रण दे रही है तो जाना चाहिये, मगर इनसे सावधान रहना चाहिये क्योंकि नीति में लिखा है कि मनुष्यों में धूर्त नाई होता है, पक्षियों में धूर्त्त कौआ होता है चार पग वाले जानवरों में सियाल धूर्त्त होता है और स्त्रियों में धूर्त मालण बताई गई है, खैर। भले धूर्त्त हो, अपने भी तो धूर्त्तों के गुरु हैं, चिन्ता क्या है। चलना चाहिये। इतना सोच रूपसेन मालण के साथ रवाना हो गया।

रूपसेन को साथ ले मालण अपने घर के द्वार पर पहुंच गई। उसको वहार बैठा कर मालण अपने स्वामी को पूछने के लिये घर में गई और पूछ ही लिया।

मालण के वचन सुन माली धुआं फुआं हो गया। हाथ में डंडा ले माली उसको मारने लगा और बोला अरे! रांड! जैसे तैसे अज्ञात पुरुप को घर ले आती है शर्म नहीं आती? बिना परिचित को कभी घर में स्थान नहीं देना चाहिये!

स्वामिन्! क्रोध न करो, ऐसा अतिथि तो महान् पुण्य के वल पर मिलता है, पुरुप पुरुप में भी वड़ा अन्तर है। कहा है कि घोड़ा, वाहन, लोहा, काष्ट, पापाण, वस्त्र, नारी पुरुप, और पानी में वहुत ही अन्तर हुआ करता है। इस भाग्यशाली पुरुप के आगमन से ही वाग हरा हुआ है, इस को हार पहनाया जिसने स्वर्ण मोर दी है, विश्वास न हो तो लो, यह देखो, ऐसा कह कर मालण ने माली का स्वर्ण मोर दे दी।

पैसा पुरुप को पागल वना देता है इसमें कोई शक नहीं। माली मोर को देख पागल की तरह अपनी भार्या को कहने लगा,

हे प्रिये! इस दानेश्वरी अतिथि का अच्छा स्वागत करना। मैं उसे अन्दर ले आता हूँ, ऐसा कह कर माली रूपसेन को सादर अन्दर ले आया! क्षेम कुशल की बातें कर खूब सन्मान किया। और भर पेट भोजन दोनों ने किया!

आओ, बैठो आपके दर्शन से मैं बड़ा प्रसन्न हुआ हूँ, नवीन क्या है! आजकल दुबले पतले क्यों है। और आज बहुत दिनों के पश्चात् दर्शन हुए हैं, घर पर आये हुए महेमान को इस तरह के प्रश्न पूछते हैं तो उनके घर सदा जाना चाहिये। "आओ, बैठो पीयो पानी, तीन बातें मोले न आनी" इतना कहने से आगन्तुक का दिल हरा भरा हो जाता है। तुलसी दासजी ने कहा है कि—

आव नहीं आदर नहीं, नहीं नैनों में नेह।
तुलसी कबहु न जाईये, कंचन बरसे मेह॥
आव है आदर है, है नैनों में नेह।
तुलसी उस घर जाईये, पत्थर बरसे मेह॥

पुण्यवान के लिये सब जगह सत्कार सन्मान हो जाता है भाग्यवान के लिये कोई विदेश नहीं है और कोई असाध्य नहीं है। रूपसेन की यहां कोई परिचित नहीं, सगा सम्बन्धी नहीं, फिर भी पुण्य के बल पर यहां सुन्दर रहने का मकान मिल गया मानो कि अपना ही घर हो। आनंद से समय निकालने लगा।

समय पर खाता है, पीता है और दिन भर व्यापारी के वेष में नगरचर्या करता रहता है। और अपनी चारों वस्तुए पोटकी बांध कर मालण के घर एक कोने में रख दी। कभी मठ में, कभी धर्मशाला में, देव मंदिर में, राजमहल में और व्यापारियों

की दुकानों पर प्रतिदिन इधर उधर घूमता ही रहता है और नित नया कौतुक देख देख कर आनंद मनाता है और खाने पीने, तथा सोने के लिये समय पर मालण के घर आ जाना, यही रूपसेन का दैनिक कर्त्तव्य हो गया।

जब एक बार रूपसेन कुमार बाजार में घूमने गया था। तब मालण ने रूपसेन की पोटकी को खोल कर देखी, उसे देखते ही चमक गई और सोचने लगी अहो! यह तो कोई जोगी दीखता है किन्तु व्यापरी की अवस्था में मेरे घर रहता है ये कंथा पात्र वगैरह से अवश्यमेव योगी हो है किन्तु सोना मोर आदि मुझे दे करके ठगना चाहता है ऐसा मालूम होता है वास्तव में कोई बड़ा धूर्त्त है कभी न कभी मेरे बच्चों को उठा ले गया तो मैं क्या करूंगी। मायावी प्राणी का सर्वथा विश्वास नहीं करना चाहिये। चूंकि दंभी लोग देवता को भी ठग लेते हैं तो मानव को ठगे उसमें क्या बड़ी बात है?

एक बार का प्रसंग स्मृतिपथ में आ जाता है कि एक देवपुर नामक सुन्दर-शहर था उसमें कुलानन्द नाम का एक सेठ अपनी भार्या मदनकला के साथ रहता था। उसके कोई संतान नहीं थी, दोनों दम्पती ने पुत्र के लिये बहुत कुछ मंत्र जत्र करवाये, भापा, भोपियों को निमंत्रण दिया, सब कुछ उपाय किये, फिर भी गोदी में खूंदने वाला पैदा नहीं हुआ, तब चामुण्डा देवी की मान्यता रखी, यदि हमारे एक पुत्र हो जाय तो एक एक लाख रुपये के तीन पुष्प चढा देंगे। कुदरत का सयोग ही ऐसा था, थोड़े ही दिनों के बाद पुत्र हो गया, सेठ ने पुत्र की खुशी मनाई, और लाख लाख रुपयों की कीमत के सुन्दर तीन पुष्प बनवाये और बड़े शानदार बाजते गाजते सेठ चामुण्डा देवी के मंदिर में गया, सेठ के लिये हजारों आदमी साथ हो गये मंदिर

चीकार भर गया, सेठ ने एक पुष्प चामुण्डा देवी के ललाट में और दो दोनों हाथ पर रख दिया। प्रणाम किया, और भाव से स्तुति कर देवी को कहने लगा। हे चामुण्डे ! माताजी ! इन फूलों को आप क्या करेंगे ? कोई दूसरा उठा ले जायगा इन से तो बहत्तर है कि एक मेरे लिये दूसरा पत्नी के लिये और तीसरा पुत्र के लिये मैं ही वापस ले जाउं तो क्या हरकत है ? तेरे नाम पर बोलमा चढा दी गई। और अपने शर्त भी चढाने की थी वह मैंने पूरी कर दी है, ऐसा कह कर तीनों पुष्प वापस ले सेठ अपने घर चला गया।

यह दृश्य देख देवी को बडा दुःख हुआ, वह अपने मित्र यक्ष के पास गई और सारी कहानी कह सुनाई, इस पर उस यक्ष ने कहा, अच्छा हुआ, तेरा भाग्य जागरूक है पुष्प से ही बला गई तेरा शरीर तो अखंड रहा, मेरे को तो एक बनिये ने बडा कष्ट दिया है, मेरी बात सुन।

एक बड़ा व्यापारी था वह विदेश के लिये रवाना हुआ, माल जहाजों में भर दिया, कुदरत का प्रकोप खतरनाक होता है मार्ग में जहाजें संकट में फस गई। उस समय उस बनिये ने मेरे लिये एक पाडा की बोलमा बोली, जहाजें संकट से बच गई और खूब धन दौलत कमा कर सेठ शान्ति पूर्वक विदेश से वापस घर आ गया! थोड़े दिनों के बाद एक पाडा ठाठ पाठ के साथ सेठ ले मेरे मंदिर में आया, मेरी मूर्ति के पाव में पाडा बांध कर जोर जोर से ढोल आदि बजाना शुरू किया जिससे पाडा भड़क गया, कूदने लगा, और मेरी मूर्ति को घसीटते हुए पाडा दौड़ने लगा, क्योंकि पाडे की डोरी मेरे पांव के बंधी हुई थी, जिससे आगे पाडा और पीछे मेरी मूर्ति। लोगों ने जल्दी से बीच में से डोरी काट दी वरना मेरी मूर्ति के टुकड़े टुकड़े हो

दिशाओं में एक एक जोजन शाखा फैली हुई है इतना विशाल वह वृक्ष है, शाखा प्रशाखा से हरा भरा वृक्ष है उन चार विशाल शाखा के ऊपर चार विद्यासिद्ध योगी पुरुष रहते हैं वे चारों ही महान् उद्दंगली हैं, बड़े तुफान एवं उपद्रव करने वाले हैं उनकी दृष्टि में यदि कोई आजाय तो मानों उनके दिन उठ गये। इसलिये तुम को भय के मार्ग को छोड़कर किसी दूसरे मार्ग से जाना चाहिये।

कुमार ने कहा मुझे तो कोई भय दीखता नहीं है क्योंकि मानव की रक्षा पुण्य करता है फिर घबराने की कोई बात नहीं है। जिसके पुण्य जागरूक है वह चाहे वन में जाय, रण में जाय, शत्रु के समुह में चला जाय, जल तथा अग्नि में गिर जाय, पर्वत पर चला जाय, अथवा श्वापदों के जंगल में चला जाय, फिर भी उसकी रक्षा हो जायगी, पुण्य ही पुरुष की रक्षा करता है। जिने श्वर भगवान के धर्म को स्वीकार करने वाले को संसार में कोई भय नहीं रहता है जिसका मन सदा धर्म के रंग में रंगा हुआ है उसकी देवता भी रक्षा करता है। उद्यम, साहस, धैर्य, बल, बुद्धि, और पराक्रम ये छ बातें जिस पुरुष में विद्यमान है उससे देवता भी डरते हैं इसलिये मेरे मन में तनिक भी भय नहीं है।

यह सुन ब्राह्मण ने सोचा, यह बड़ा बहादुर है, डरने वाला नहीं है अवश्य जायगा ही तो फिर आशीर्वाद देकर अपनी दक्षिणा तो ले लूं। ऐसा विचार कर ब्राह्मण ने कहा भाई! तुम जाओ, मगर सावधान रहना, रास्ते में तेरा कल्याण हो यह मेरा आशीर्वाद है तुम अपने देशाटन करने के मनोरथ को पूरा करके इप्सित वस्तु की प्राप्ति करके वापस जल्दी से जल्दी राजधानी में लौट आना। अच्छा, जाओ तुम्हारा कल्याण हो।

ब्राह्मण के आशीर्वाद वचन को सुन रूपसेन ने कहा आप राजधानी में किसी को मत कहना कि रूपसेन कनकपुर गया है लो मेरी तरफ से दक्षिणा। ऐसा कह कर दो चार मोरे पण्डित जी के हाथ में पकड़ा दी। ब्राह्मण बार बार आशीर्वाद देता हुआ आगे बढ़ गया।

रूपसेन ने चलते हुए सोचा, मानव को सत्व के बल पर ही सिद्धि प्राप्त होती है। कायरपना ही पतन का कारण है, मनुष्य के उत्थान के लिये सत्व ही श्रेयष्कर है, सत्व से ही मेघ बरसता है। सत्व से ही देवता दर्शन देते है और सत्व के द्वारा ही संसार में प्रतिष्ठा बढती है इस तरह विचार पूर्वक हृदय में पंच परमेष्ठी नमस्कार महामंत्र का ध्यान धरता हुआ रूपसेन आगे बढ़ने लगा।

नमस्कार के समान कोई दूसरा मंत्र नहीं, शत्रुंजय के समान दूसरा कोई तीर्थ नहीं, और वीतराग के समान दूसरा कोई देव नहीं। ऐसा ध्यान रूपसेन के मन में चल रहा था। चलता हुआ थोड़े आगे गया कि शुभ शकुन भी हो गया। भाग्यवान के लिये सब अनुकूल ही हो जाता है। रूपसेन का भाग्य भी कम न था। शकुन भी इतना सुन्दर हुआ कि सब तरह से आगे विजय हो नोवला भी दक्षिण भाग से सन्मुख मिल गया।

काला हिरण, कौआ, कुत्ता, मोर इतने जीव चलते हुए मनुष्य के दाहिन भाग में होकर निकल जाय तो भयंकर अटवी अथवा चोरों की पल्ली में चला जाय तो उसको कोई नहीं सता सकता, उसे देख चोर भी भाग जाय।

सियार मुख में भक्ष्य पदार्थ लेकर के, ताथा भारण्ड पक्षी और नेवला जीमण भाग में सन्मुख आजाय तो उस पुरुष को सब इच्छित सम्पति अनायास ही मिल जाती है।

रूपसेन को भी नेवला ने शकुन दे दिया, रूपसेन नदी पहाड़ वगैरह को पार करता हुआ मध्याह्न का समय होने पर भूख प्यास से व्याकुल हो गया। वास्तव में विदेश बड़ा कठिन है एक तो भयंकर जगंल है और दूसरा हिंसक जानवरों का यह बड़ा केन्द्र है। और प्यास भी सता रही है पैरों से चलना है और अभी एक सौ जोजन जाना है इसी विचार के साथ चलता हुआ एक सुन्दर छायादार नीम के वृक्ष के नीचे जा विश्राम कर लगा। कुछ थकावट दूर होने पर सोचने लगा। अहो ! विधाता ने कितना सुन्दर वृक्ष का निर्माण किया।

वायु का नाश करने वाला, पित्त को मीटाने वाला, कफ को नाबूद करने वाला, घाव को भरने वाला, भूख को बढाने वाला, पेट को साफ करने वाला, आंख की रोशनी बढाने वाला, कुष्ट आदि विष को शमन करने वाला, कृमि को हरण करने वाला, ताप को समाने वाला, बालको को हित कारी, और कलिकाल में कल्पवृक्ष के समान इस नीम्ब को मेरा नमस्कार हो। सामान्य वृक्ष भी मार्ग में रहे हुए पथिक के लिये बड़े उपकारी है, मरुधर में एरण्डा का झाड़ भी प्राणी पर उपकार करता है। उसी का जीवन धन्य है कि जिसने अपने जीवन को परोपकार के काम में लगा दिया !

रूपसेन विश्राम लेने के बाद आगे बढा, थोडी दूर जाने पर निर्मल जल से परिपूर्ण एक नदी आगई, रूपसेन बड़ा प्रसन्न हुआ, वस्त्र से छान कर पानी पिया, नीति में कहा है कि, सत्य से परिपूर्ण वाक्य बोले, यानि झूठ कभी न बोले, मानसिक शुद्धि के

साथ आचरण करें। पांव दृष्टि से देख कर आगे रखें जिससे दो तीन फायदा होता है, एक तो जीव की रक्षा हो जाय, दूसरा अपने पैर में कांटा न लगे और तीसरा यह है कि पड़ी वस्तु मिल जाय! वस्त्र से छान कर पानी पीना चाहिये। क्योंकि पृथ्वी पर तीन रत्न बताया है जल, अन्न और सुभाषित वाणी।

खूब भर पेट पानी पीया, और आगे चलते हुए रूपसेन की दृष्टि उस वृक्ष पर जा पड़ी जो कि ब्राह्मण ने कहा था उसे देखते ही रूपसेन सावधान हो गया और चारों तरफ देखते हुए धीरे धीरे बढता हुआ रूपसेन वृक्ष के निकट आने लगा।

इतने में वहाँ रहे हुए योगियों ने भी उनको आते देखा, और परस्पर बातें करने लग गये एक ने कहा पहले विश्वास देना चाहिये, उनके बाद सब कुछ कर लेंगे। दूसरे ने कहा, तुम्हारा कहना तो ठीक है मगर यह कोई महा पुरुष दीखता है, सुन्दर आकृति, और भव्य ललाट! एवं हाथी की तरह मस्त चाल, ये सब उत्तम पुरुष के लक्षण हैं और वह अपनी ओर आ रहा है तो अपना भी फर्ज है कि उनके सम्मुख चलें, सब ने एक ही साथ हां-में हां मिला दी। उसी समय चारों स्वागत के लिये रूपसेन के सन्मुख रवाना हो गये।

दूर से अपने सन्मुख आते हुए योगियों को देख रूपसेन पूर्ण सावधान हो गया और ब्राह्मण के वचनों को याद करने लगा। चार योगी कहा था, ये चार ही आ रहे हैं जरूर कुछ उपद्रव करेंगे ही मगर अपने तो बुद्धि से खेलना है जिससे अपनी विजय हो जाय। बुद्धि से कोई बड़ा नहीं है, बुद्धि का धन जिसके पास है वह सदा आजाद है उसकी देवता भी मदद करते है, इसलिये यहां बल से काम नहीं चलेगा, यहां तो कल से काम

करना होगा ऐसा सोच पांच बाण में से एक बाण रूपसेन ने योगी के देखते हुए तोड़ दिया !

यह घटना देख योगी भी विचार में पड़ गये ! चारों तर्क वितर्क पूर्वक रूपसेन के पास आते ही पहले यही प्रश्न किया कि-एक बाण व्यर्थ ही क्यों तोड़ा ?

उत्तर में रूपसेन ने मधुर ध्वनि से कहा बाबाजी ! क्या कहूँ ? कहना तो ठीक नहीं है, मगर पूछ लिया है तो कहना ही पड़ेगा। बात यह है, कि मैंने सुना था कि बड़ के वृक्ष के ऊपर पांच योगी रहते हैं और वे पथिक को बड़ा परेशान करते हैं इसलिये पांच बाण लेकर के पांचों को मारने के लिये आया था मगर पांच के बदले चार ही देखने में आये।' अतः मैंने एक व्यर्थ जान तोड़ दिया। चार बाण से तुम को साफ कर दूंगा। दूसरी बात यह भी है कि आप लोगों को ढूंढते २ काफी समय निकल गया। इस सारे जंगल को खोज डाला, लेकिन कहीं पता न चला, किन्तु आज अचानक आपका मिलना हो गया बड़ी खुशी हुई, आज मैं अपना उद्देश को पूरा कर दूंगा !

लंगोटी पकड़े तो तूंबी पड़ जाय और तूंबी पकड़े तो लंगोटी पड़ जाय ऐसी दशा बाबाजी की रूपसेन के वाक्य से हो गई। आये तो थे जाल में फसाने के लिये, लेकिन स्वयं फस गये ! चारों ने सलाह की, एक ने कहा भाई ! मैंने तो पहले ही कहा था, कोई महा पुरुष आ रहा है। खैर ! अब ऐसे वाक्य प्रयोग करो, जिससे अपनी माया जाल में फस जाय। ऐसा निर्णय कर एक ने कहा हे सत्पुरुष ! आपको हम लोग सज्जन एवं दानेश्वरी समझ करके सामने आये हैं, जिसका आपने यह बदला दिया कि हम लोगों को ही मारना चाहते हो। हमारे लिये

आप पूरा चिन्तवन कर रहे हो यह अच्छा नहीं है। क्योंकि हम तो ऐसा जानते हैं कि आप जैसे सत्पुरुष के साथ सत्संगति भाग्य से ही हुआ करती है। आज हमारा बड़ा भाग्य है कि आपका दर्शन हो गया! और अब सत्संगति का लाभ मिलेगा।

हम लोग तो संसार से विरक्त हैं, वैराग्य प्राप्त होने से हम लोग निर्जन वन में रहते हैं किसी के साथ प्रपंच नहीं करते हैं और केवल तत्व चिन्तवन में समय निकालते हैं, आपको आते देख हम लोगों ने यही सोचा कि कोई उत्तम पुरुष आ रहा है उनकी संगति से कुछ तत्व की बातें सुनने को मिलेगी इसी आशा से आपकी सेवा में आये हैं क्योंकि संसार में विश्राम के तीन मुख्य कारण बताये हैं एक तो पुत्र, दूसरी नारी, और तीसरी सत्संगति! आज आपकी संगति से हमारे हृदय में आनंद भी नहीं समा रहा है और आप हमें मारने की सोच रहे हैं। यह कैसा न्याय?

रूपसेन ने कहा बाबाजी! घबराईये नहीं। मारने की बात पीछे करेंगे, अभी आपने सत्संगति का कहा वह बिल्कुल सही है क्योंकि इस कडवे संसार रूपी वृक्ष के अमृत तुल्य दो ही फल है एक तो कविता मय विद्वद् गोष्ठी, और एक सत्संगति। मुझे भी बडी प्रसन्नता है कि आज आपके दर्शन पाये! रूपसेन भी तरह तरह की बातें करने लगा यों करते करते वड़ के मूल में सब पहुँच गये! सब शान्ति से बैठ गये परस्पर खूब वैराग्य की बातें कही सुनी। यह सब वैराग्य ऊपर का ही था। केवल एक दूसरे को फसाने की चेष्टा मात्र थी। रूपसेन भी पूर्ण सावधान था। दोनों दाव पेच बातों का खेलने लगे। आखिर रूपसेन ने बाबाजी को पूछा! आप लोगों को व्रत लिये हुए को कितने वर्ष हुए, यह

तो बताओ ? बाबाजी ने कहा पूरे पांच सौ वर्ष हो गये । डींग भी कम न मारी । मगर रूपसेन भी पकी पकाई खोपडी थी, उसने कहा धन्य भाग्य, और धन्य घडी, आज मेरा दिन सफल हो गया । इतने पुराने योगीराज का दर्शन तो महान् पुण्योदय पर हुआ करता है । एक बात बताइये बाबाजी ! इतने वर्षों में कोई सिद्धि प्राप्त हुई या नहीं ? अगर हुई है तो क्या ? इस तरह मीठी मीठी वाणी से बाबाजी को प्रसन्न कर दिया । "वशीकरण एक मंत्र है तज दे वचन कठोर, वाणी की मीठास ही वशीकरण मंत्र है । प्रिय वचन से सारा संसार ही वश में हो जाता है तो उस में बाबाजी भी वश में हो तो कोई बडी बात नहीं है ! इसलिये मानव को सदा प्रिय वचन ही बोलना चाहिये ।

योगीराज भी रूपसेन को विश्वास में लेने के लिये कहने लगे, हे कुमार ! आज से तुम हमारा आत्मीय बन्धु हो तुम्हारे सामने हम अपनी गुप्त बात भी कर देते हैं तुम सावधान होकर सुनो ! हम लोग छ वर्ष तक एकाग्रचित से देवता की आराधना में बैठे जिस से अधिष्ठायक देव हमारे पर प्रसन्न जल्दी हो गया क्योंकि चलायमान चित्त से जप करने से, मेरु का उल्लंघन करने से, तथा नख का अग्र भाग माला पर लगने से, जप निष्फल प्रायः बताया है किन्तु हम लोगों की साधना अपूर्व थी देव प्रसन्न होते ही अपूर्व चार वस्तुएं देकर वह तो चला गया । उन चीजों का प्रभाव भी बड़ा गजब का है । देखो ये चार वस्तुएं हैं ऐसा कह कर रूपसेन के सामने चारों वस्तुएं रख दी । और कहा यह जर्जर कंथा प्रतिदिन पांच सौ सोना मोर देती है । यह दंडा निर्जीव पदार्थ को सजीव कर देता है, यह पवन पावडी आकाश मार्ग में यथेष्ठ उड़ा ले जाती है । और यह अक्षय पात्र लाखों करोड़ों आदमियों को एक साथ भोजन देता है । ये चार वस्तुएं

हमारे विवाद का कारण बन गई है। हम लोग आपस में लड़ रहे है। इसलिये आप हमारे है आप तटस्थ होकर के हमारे विवाद को मिटा दीजिये। आप के ऊपर हम को विश्वास है यह हमारी गुप्त बात है फिर भी आप से गुप्त नहीं रखी है अब आप कृपा करके हमें चारों को विभाग करके चारों वस्तुए दे दीजिये जो भी आप देगें वह हम लोग सहर्ष मंजूर करेगें।

प्रभाव सहित वस्तुओं को लेकर कुमार ने कहा योगिराजों इसमें लड़ने की कोई बात नहीं है आप को मैं बरा बर कर दूंगा न किसी को ज्यादा और न किसी को कम। आप भी हमारी बुद्धि की परीक्षा कर लेना। मैं कितना सुन्दर विभाग करता हूँ।

इस पर योगियो ने कहा कुंवर सहाब! आप के ऊपर हम सब को भरोसा है आप का आदेश प्रमाण है। कोई नहीं बदलेगा। यह हम वचन देते है।

कुमार ने कहा अब एक काम करो, तुम चारों चार ही दिशा में जाकर के वड़ की ओट में बैठ जाओ और मैं ठीक ठीक विभाग करके ताली बजाता हुआ जो भी वस्तु तुम्हारी तरफ फैंकूगा उस समय दौड़ते हुए आकर के ले लेना। तब तक मेरी तरफ मत देखना। ऐसा ही करेगें। ऐसा कह कर योगी सब जा ओट में बैठ बातें करने लगे, अच्छा हुआ अपने विश्वास में यह आ गया है इनको अग्निकुण्ड में डाल स्वर्ण पुरुष बना लेगें। अब अपना काम सिद्ध है इस तरह आनन्द की बातें बाबाजी करने लगे मगर यह कहां पता कि खढ़ा खोदने वाला ही डूब मरता है। दूसरों के लिये बूरा सोचते है तो खुद को ही बूरा हो जाता है। बाबाजी मन के लड्डू खा रहे थे मगर वह भी तो इनका गुरु घंटाल निकला।

जाता और मेरी मृत्यु हो जाती, तुमको विश्वास न हो तो देख, सारे शरीर के घसीटने का घाव पड़ गया है। ऐसा कह कर यक्ष ने अपना क्षत विक्षत शरीर देवी को बताया, पाडा तो भाग गया और मेरी मूर्ति को उठा लोगों ने वापस मूल स्थान पर स्थापित की। अब तुझे मैं क्या कहूँ अभी भी सारा शरीर दुःख रहा है। तेरा भाग्य अच्छा है कि इस प्रकार की तकलीफ से तूं बच गई।

इस तरह यक्ष के वाक्य सुन देवी विलक्षी होकर अपने स्थान पर चली गई और अखण्डित रहने से अपने को धन्य मानने लगी।

मालण इस प्रकार चिन्तवन करती है, ऐसे धूर्त लोग हुआ करते है कि देव और देवी को भी ठग लेते है। यह रूपसेन भी कोई धूर्त्त दीखता है व्यापारी के वेष में घूमता है मगर जोगी के योग्य सामग्री से यह निश्चय हो जाता है कि यह अवश्यमेव कोई धूर्त है। अब बजार से लोट कर आजाय•तो घर में भी प्रवेश न करने दूं। और उस की पोटकी भी बाहर फैंक देना चाहिये। ऐसा सोच मालण ने रूपसेन की पोटकी अपने घर के पीछे वाडा में डाल दी। और घर के द्वार पर खड़ी खड़ी पाडोसन से बातों में उतर गई।

प्रायः कर-नारी के पेट में बात नहीं टीकती है कहावत है कि कुत्ते के पेट में क्षीर टीके, आटे को चालणी में पानी तो टीके स्त्रियों के पेट में बात टीक सकें महिला को प्राईवेट कोई बात कह कर के उपर से कह देना चाहिये कि किसी को मत कहना हो। बस फिर क्या था विना रेडियों ही सारे गांव में वायु की तरह फैल जायगी। मालण का हृदय भी तुच्छ था दूध की तरह

उफाण आगया और पडोसण को रूपसेन बड़ा धूर्त है इत्यादि कईएक बातें कह सुनाई।

इतने में तो रूपसेन कुमार नगर की शोभा एवं कौतुक को देख कर मालण के घर लौट आया। उसे देखते ही मालण अट संट बकने लगी और झगड़े का रुप धारण कर लिया।

कुमार ने कहा बहन। आज बिना हेतु ही विवाद क्यों करती है। व्यर्थ का झगडा करना अनर्थ पैदा करना है पांच प्रकार के वकार बड़े अनर्थकारी माना है याद है? सुन लीजिये वेर, वैश्वानर (अग्नि) व्याधि, व्यसन और वाद-विवाद ये पांचों ही अनर्थों का मूल है। मैं तेरे साथ विवाद नहीं करना चाहता मगर यह बता कि आज तेरे हुआ क्या? क्या भांग पी है? इतना घनिष्ट प्रेम कहां गया? प्रायः कर छोटे आदमी की प्रीति पतंग रंग की तरह अथवा काफूर की तरह उड़ जाया करती है। जल्दी प्रेम करें और जल्दी तोड़ भी देवें, वास्तव में वह व्यक्ति धन्यवाद के पात्र है जो चोल मजिठ की तरह सदा प्रेम रखता है। दर असल स्त्री के साथ जो स्नेह करता है वही मूर्ख है।

कुमार के वचन सुन मालण ने कहा अरे धूर्त्त ? मैं तो सरल परिणाम वाली हूँ जो कि तेरे धूर्त्त पन को जान न सकी। तेरे जैसे धूर्तों से प्रेम करें वे-ही लोग मूर्ख है। नीति में कहा है कि बादल की छाया, घास की अग्नि, दुष्ट से प्रीति, स्थल पर जल, वेश्या के साथ राग, और कुमित्र के साथ दोस्ती, इन छ बातों का जो भी विश्वास करता है तो आपत्ति मोल लेना है। तेरा भी इसी में नम्बर है और सच्च कहूं तो तू इन-से भी ज्यादा बदमाश है।

कुमार ने कहा बहन तूं ने कैसे जाना कि मैं धूर्त्त हूँ। क्योंकि

नीतिकार ने कहा है कि मुख तो कमल के समान प्रसन्न रखे वाणी चंदन से भी शीतल यानि मीठी मीठी बातें करें और हृदय में कैंची के समान भाव रखें यानि मौका मिलने पर काटने की बुद्धि रखे उनको धूर्त बताया है। तो तू बताव कि मैंने तुझे कैसे और कब ठगा ? सही सही बतादे।

मालण ने कहा हे धूर्त ? सुन तू आज बाहर गया था तब मैंने तेरी पोटकी खोली जिससे पता चला कि तू पहले दर्जे का धूर्त है। चूंकि उस में योगी का सामान है इसलिये मैं जान सकी हूँ कि तू इतना कुटिल आदमी है। अतः आज पीछे मेरे घर मत आना चाहे जहां कोई दूसरा स्थान ढूंढ लेना मैं तो हरगिज तुझे घर में नहीं आने दूंगी।

यह सुन कुमार ने कहा अरे बहन। तू तो वास्तव में भोली है मालूम होता है कि तू आज किसी दुष्ट के सीखाये लग गई है। इसलिये तो कल्पवृक्ष को एरंडा और हंसराज को कागराज समझ रही है। कोई बात नहीं मेरे बहुत स्थान है; यह मेरे तेरे की गणना तो छोटे आदमी की है। उदार दिल वाले पुरुषों के लिये तो सारा संसार ही कुटुम्ब है अब मैं तेरे घर नहीं आऊंगा मगर मेरी वस्तुएं तो लेने दें, जिससे मैं किसी और जगह जाकर निवास करूं।

अरे धूर्त ! तेरी वस्तुएं तो कांटे की बाड़ में डाल दी है मेरे घर में नहीं है मालण ने रोष पूर्वक कहा।

मैंने तेरा क्या बिगाड़ा जो कि मेरे प्राण तुल्य चारों चीजें बाहर फैंक दी। मेरा जीवन ही उस में है लाव कहां है ? वरना मैं सरकार के पास जा शिकायत करूंगा। कुमार ने कहा।

डर के मारे वाड़ में से पोटकी ला मालण ने कुमार को दे दी।

कुमार अपनी वस्तुओं को स्वाधीन कर बोला वहन ? इस कंथा आदि वस्तुओं का प्रभाव तो देख ले फिर मैं तो चला जाउंगा तुमने तो रत्न को कंकर, कामकुम्भ को मट्टी का घड़ा और बहुमूल्य प्रवाल को गूंजा समझ कर बाहर फेंक दिया मगर इन का प्रभाव गजब का है।

मालण ने कहा यदि कोई चमत्कार हो तो बताव तूं तो बड़ा धूर्त्त है केवल गप्प मारना सीखा है। और है भी क्या तुमारे पास ?

कुमार ने भी समयोचित थोड़ा आडम्बर किया मानो कि कोई मंत्र पढ़ रहा हो वैसा डोल किया, न करे तो चले भी नहीं क्योंकि स्त्री जाति का क्या भरोसा ? वरना उसे ख्याल आ जाय कि मंत्र के बल पर ही ये वस्तुएं अपूर्व सिद्धियाँ देती है। ऐसा बताने के लिये थोड़ा इधर उधर का मंत्र उच्चारण कर जर्जरकंथा को हिलाने लगा। उसी समय धड़ाधड़ पांच सौ स्वर्ण मोरों का ढेर लग गया। कुमार ने मालण को कहा वहन यह धन सब तूं ले ले क्योंकि तेरे मकान में इतने दिन शान्ति से रहा, उसका यह भाड़ा मान लेना। लेजा मेरी आज्ञा है विलम्ब न कर। और शान्ति पूर्वक रहना अब मैं जाता हूँ।

बड़े आश्चर्य के साथ मालण ने धन ले लिया पड़ोसण इस लीला को देख ताजूब हो गई। वास्तव में पुरुष पुरुष में बड़ा अन्तर होता है। यह तो साक्षात् कल्पवृक्ष ही है। यदि यह मेरा महेमान बन जाय तो मेरा दारिद्र सदा के लिये दूर हो जाय ऐसा सोच पड़ोसन ने कुमार को कहा हे सत्पुरुष ! आप कृपा कर मेरे घर पर पधार जाईये। मैं अपनी शक्ति के अनुसार आपकी भक्ति

करूंगी और आप सुख पूर्वक चिरकाल तक बिराजिये। जिसका प्रबल पुण्योदय हो उनके घर ही आप जैसे अतिथि का आगमन होता है आप मेरे घर को पावन करो।

यह सुन रूपसेन को धूर्त कहा झगड़ा किया उसका पश्चात्ताप करती हुई मालण ने पडोसण को कहा। अरे कुमार तो मेरे ही घर रहेगा चूंकि वन में से मैं लाई हूँ यह तो मेरा भाई है तू झगड़ा करने के लिए मेरे द्वार पर क्यों आई ? हट जा यहां से चली जा, यह तो मेरा महेमान है और रहेगा। इस तरह मालण और पड़ोसन के बीच युद्ध छिड़ गया। दोनों गुस्से में आ गई एक दूसरे को अवाच्य शब्दों से गालियां देने लग गई मगर रूपसेन अश्लील शब्दों को कैसे सुन सकता था ? दोनों के विवाद को कुमार ने बंद करवाया समझा बुझा करके पाड़ोसन को उन के घर रवाना करदी। फिर कुमार ने मालण को कहा तुमने तो मुझे घर पर आने का निषेध कर दिया तो फिर उन बिचारी से झगड़ा क्यों ? मेरी इच्छा होगी वहां जाउंगा और रहूँगा। किन्तु तू अब आग्रह कर रही है उसका कारण तो मौरे है। निश्चय करके धन ही सब को पूजाता है। मैंने सुना भी है। एक बार जब दशरथ ने रामचन्द्रजी को वनवास दिया था उस समय रामचन्द्रजी वनवास जाते हुए गुरु वशिष्टजी के आश्रम पर उनका आशीर्वाद लेने गये तब निर्धनी राम को जान वशिष्टजी ने शिष्य के द्वारा उनको कहला दिया कि अभी गुरुजी ध्यान में बैठे है अभी दर्शन नहीं हो सकेगा। यह सुन बिना वंदन किये ही रामचन्द्रजी आगे बढ़ गये, वनवास की अवधि को समाप्त कर लंकापति रावण को जीत कर के बहुत परिवार एवं सत्कार के साथ पुनः अयोध्या नगरी में आने के समय वही आश्रम रास्ते में आया। उस समय रामचन्द्रजी फिर गुरु को वंदनार्थ आश्रम की ओर बढ़े तब सन्मुख आकर के वशिष्टजी ने

उनका बहुत सत्कार किया और आशीर्वाद दिया। मौका देख राम ने वशिष्टजी को कहा वही मैं हूँ वही आप हैं और वही आश्रम है किन्तु वनवास गमन के समय दर्शन भी दुर्लभ था और इस समय यह आदर क्यों ? तब वशिष्टजी ने कहा वही आप है वही मैं हूँ और यह वही आश्रम है किन्तु उस समय राम निर्धनी था और इस समय धनेश्वर राम है इसलिये आदर सत्कार किया जा रहा है।

इससे यह सिद्ध होता है कि केवल धन ही का उपार्जन करना चाहिये, धन मूल ही संसार है, जिस मनुष्य के पास धन नहीं है उनसे और मुर्दे में कोई अन्तर नहीं रहता है, चूंकि निर्धनी की संसार में कोई किम्मत नहीं है, वास्तव में धन से ही सारा संसार वश में हो जाता है कहा है कि—

नाणा विना नो नाथियो, नाणे नाथालाल।
नाणे लोक पूजा करे, नाणे थाये लाल।

इसलिये हे मालण ! तू भी वैसी ही दीखती है किन्तु जहां प्रेम नहीं है वहां क्षण भर भी मैं नहीं ठहरता। अच्छा आनन्द में रहना, मैं जाता हूँ जहां मेरा भाग्य ले जायगा वहां मैं जाउंगा। ऐसा कह कर रूपसेन अपना झोली झंडा लेकर उठ खड़ा हुआ और चलने लगा।

मालण ने देखा, वास्तव में यह चला जायगा, एकदम दौड़ करके मालण उसके हाथ में से पोटकी बलात् खींच कर अपने मकान ले गई, और वह मेरा एक अपराध क्षमा कर, तू मेरा भाई है मेरा गुन्हा क्या माफ नहीं करेगा ? ऐसा कहते २ रूपसेन का हाथ पकड़ कर मालण अपने मकान में ले आई।

यह सब दान का ही प्रभाव है, याचक को दान दिया जाय तो कीर्ति का पोषण होता है, बांधवों को देने से स्नेह बढ़ता है और सुपात्र में देने से पुण्य की वृद्धि होती है लेकिन दान किसी भी जगह दिया हुआ निष्फल नहीं जाता है। कुमार इस तरह मन ही मन चिन्तवन करता हुआ मौन लेकर के बैठ गया।

उदासीन दशा में देख मालण ने कहा, कुमार! बारम्बार कहती हूँ कि एक अपराध माफ करदे, आज पीछे तू मेरा सग्गा भाई है और कभी भी तेरे से किसी बात से परहेज नहीं रखूंगी, यहां जगत प्रभु अपने बीच साक्षी है, मैं सही कह रही हूँ। मालण के वचन से कुमार को कुछ शान्त्वना मिली। मानसिक चिन्ता का त्याग कर मालण के घर शान्ति से रहने लगा और सग्गे भाई बहन की तरह आनन्द से बातें करने लगें।

विनोद की बातें करते हुए कुमार ने शेष तीन वस्तुओं का प्रभाव भी मालण को कह दिया, यद्यपि शास्त्र में निषेध है कि गुप्त वार्ता स्त्री को नहीं कहना चाहिये फिर भी रुपसेन ने जरा भी भेद न रखा, दंड, पवन पावडी और अक्षय पात्र का चमत्कार बता दिया। इसे देख मालण भी बड़ी प्रसन्न हुई और कुमार से अधिकाधिक प्रेम करने लगी।

एक बार परस्पर बातें करते हुए उपर के छत पर बैठे हुए थे और राजमार्ग पर दृष्टि करते हुए अचानक कुमार की दृष्टि सप्त मंजिल के मकान पर जा पड़ी, सफेद एवं विशाल गगन चुम्बी महल को देख कुमार ने मालण से पूछा यह प्रासाद किस का है? प्रत्युत्तर में मालन ने कहा, भाई! यह कनकपुर शहर है और कनकभ्रम नाम का न्यायप्रिय यहां का राजा है! पट्टरानी का नाम है कनकमाला। दोनों में अथाग प्रेम है इन के एक पुत्री है, जिनका नाम कनकावती रखा है रुप गुण में साक्षात

सरस्वती के समान है, चौसठ कला में भी दक्ष है उनके रहने का यह भव्य महल है। सातवें मंजिल पर वह आनंद से रहती है। मैं उन को हमेशा पुष्पों का हार पहनाती हूँ इस मकान के तीन सौ साठ तो द्वार है और चौरासी झरोखा है। प्रतिदिन एक एक द्वार वारा फरती खुलता है यानि आज जो द्वार खुलता है वह कल नहीं। इस तरह प्रतिदिन द्वार खुलता है और राजकुमारी झरोखे में बैठ नगर की लीला देखती है। दृष्टि दोष के भय से राजा उसे कहीं बाहर भी घूमने नहीं देते हैं। खास कोई कार्यवश बाहर जाना हो तो राजा की आज्ञा लेनी पडती है और साथ में कईएक दास दासी वर्ग को राजा भेजता है, और एक एक द्वार के ऊपर दो दो पहरेदार नंगी तलवारों से सज धज के साथ बैठे रहते हैं कोई भी व्यक्ति विना राजा की आज्ञा अंदर नहीं जा सकता।

इस प्रकार उस महल का इतिहास मालण से सुन कुमार ने कहा, वहन! अपनी तरफ का द्वार कब खुलेगा! यदि खुल जाता तो मैं भी उसे देख लेता कि वह कितनी स्वरुपवान है! मालण ने कहा, यह तो मैं नहीं जानती हूँ।

इस प्रकार प्रात: काल के समय भाई बहन बात चीत कर रहे थे सहसा उसी समय वही द्वार खुल गया। कुमार बड़ा प्रसन्न हुआ। क्यों न हो! उत्तम पुरुष के विचार मात्र से मनोरथ पुरे हो जाते हैं। पुण्य के विना इच्छित फल नहीं मिल सकता! शुभ पुण्य के उदय से तथा भवितव्यता के वश से कुमारी की दृष्टि भी कुमार पर जा पडी। और कुमार भी उसे देखने लग गया। वास्तव में रुप से तो सरस्वती तुल्य है गुण का तो विना परिचय पता नहीं लग सकता है फिर भी देवांगना के सदृश होने से गुण ठीक ही होगा। ऐसा सोच पूर्वक देखते हुए कुमार कुमारी

की आंखें आपस में टकरा गई बिजली के जैसा हृदय में दोनों के सन्नाटा छा गया। दोनों के हृदय में एक दूसरे के प्रति प्रेम के अंकूरे फूटने लगे। कविने कहा है कि–

नयन नयन की पारसी, नयन नयन का हेत।
नयन नयन के नयन में, नयन नयन कह देत॥

परस्पर दिल की बातें आंखों ने करली, न तो अपने स्थान से कुमार उठता है और न राजकुमारी। एक दूसरे को देखते हुए पाषाण की पुतली की तरह खड़ी हो गये। अनिमेष दृष्टि से देखते ही रह गये।

कुमार का सौन्दर्य रुप एवं योग्य उम्र को देख कुमारी मन ही मन सोचने लगी। मेरे पिताजी वर के लिये सदा तलास कराते है और चिन्तित रहते हैं मगर वर नहीं मिल रहा है लेकिन इन के समान वर फिर कहां से मिलेगा? यह तो घर बैठे गंगा आ गई है। देव योग से यह महापुरुष मेरा वर बनें तो मेरा जन्म सफल है। इसने मेरे चित्त की चौरी करली है इसलिये इस जन्म में मेरा यही स्वामी हो, अन्यथा मृत्यु ही मेरा सर्वस्व है। किन्तु मेरे दिल की बात किस को कहूँ! यहां मेरा कोई आत्मीय नहीं है जोकि मेरा संदेशा उन को पहुंचा सके। और मेरे प्रिय की बात मुझे सुनावे। राजकुमारी कुमार पर मुग्ध हो गई। और अपने मन से उसे स्वामी बना लिया।

पूर्व भवके संस्कार मानव के साथ आता है इसमें कोई शक नहीं। पूर्व संस्कार के बल पर ही एक दूसरे को खींच रहा है न तो कभी राजकुमारी ने उसे देखा और न ही रुपसेन ने, मगर पूर्व भव का स्नेह नजदीक ले आ रहा है। राजकुमारी को जो विचार पैदा हुआ था ठीक वे ही विचार रुपसेन के दिमाग में भी

चक्कर काटने लगे। अहो! क्या रूप है? विधाता ने संसार का सब रूप इस में भर दिया है। देखने मात्र से इतना हृदय प्रसन्न हो रहा है और यदि इन के साथ आलिंगन अथवा चुम्बन करने से कितना सुख मिलेगा। इस तरह रूपसेन सोचने लगा। एक तो राजमहल में है और दूसरा मालण के घर। इतना दूर होते हुए भी प्रेम के सूत में गाढ बंधते जारहे थे एक दूसरे को उठना भी बड़ा कठिन हो गया। सूर्य उदय होने पर सूर्य विकाशिया कमल खिल जाता है भले सूरज दूर है मगर कमल को प्रसन्नता पैदा हो जाती है ठीक वैसे ही रूपसेन भानु को देख कर कनकावती रूप कमल अत्यंत खिल गया।

कुमारी की सौन्दर्यता पर लट्टू बना हुआ रूपसेन भी विचार सागर में तैरने लगा। यदि इस कन्या के साथ मेरा विवाह हो तब तो मेरा पुण्य जागरुक है। येन केन प्रकारेण एक वार मिलना हो जाय तो भी मानूंगा कि मेरा भाग्योदय है। लेकिन यह सब कुछ मनोरथ धर्म के प्रभाव से ही पूरा हो सकेगा। मेरा आत्म विश्वास है कि अवश्यमेव कार्य सिद्ध होगा। इसमें कोई शंका नहीं। किन्तु उपाय जरुर सोचना चाहिये।

कनकावती भी बहुत देर तक खडी देख कर सखियों के निमंत्रण से अन्दर चली गइ किन्तु मन रूपसेन के पास छोड़ गई। अन्दर जा थोडी देर सखि सहिलियों से अनिच्छा से भी इधर उधर की बातें कर उन्हें रवाना करदी और आप स्वयं सोचने लगी। यदि इस महानुभाव के पास कोई कला अथवा सिद्ध विद्या हुई तो एक बार अवश्य मिलेगा ही। और यदि यहां आ गया फिर तो मैं सब कुछ ठीक कर लूंगी। क्योंकि मेरा आत्म विश्वास है और विश्वास ही फल देता है। आत्म विश्वास भी एक अपूर्व चीज है वह आदमी को मजबूत बना देता है,

इसलिये अवश्य कार्य सफल होगा इस प्रकार आत्म विश्वास पर किसी तरह दिन पूरा कर संध्या के समय उसी झरोखे में जा राजकुमारी रूपसेन की प्रतीक्षा में बैठ गई।

रूपसेन के लियें भी एक दिन एक युगसा हो गया। और दिन भर दिमाग में एक ही धून लग गई, कब सूरज अस्त हो और कुमारी के पास जाउं। येन केन प्रकारेण दिन पूरा किया। सूर्य भी अपनी प्रियतमा से मिलने के लिय अस्ताचल की ओट में जा छीपा। रात्री का अंधकार पृथ्वी पर छा गया। लोग निद्रा की गोद में सो गये। सारा गांव ही सो गया। एक कविने ठीक कहा है कि—

पहले पहरे सब कोई जागे, बीजे पहरे भोगी।
तीजे पहरे तस्कर जागे, चोथे पहरे जोगी।

भोगी लोग दूसरी पहर में जागते रहते हैं रूपसेन की भी यही दशा हो रही थी। वह भी सुन्दर वस्त्रों से सज धज के साथ पवन पावडी के बल पर राजकुमारी के महल में सानंद पहुँच गया। अचानक आकाश मार्ग से आते हुए देख भयभ्रान्त हो गई और राजकुमारी खडी होकर उनका स्वागत करने लगी। मगर लज्जा से मुख नीचा कर लिया हृदय में प्रेम भी कम न था। भाषण देश बता देता है, आचार कुल बता देता है, शरीर भोजन बता देता है और संभ्रम स्नेह बता देता है, इसी तरह राजकुमारी रुपसेन के दर्शन मात्र से ही बड़ी प्रसन्न हुई मयूर की तरह नाचने लगी और बड़े सन्मान के साथ रूपसेन को सुन्दर पल्यंक पर बैठा दिया वह स्वयं नीचे बैठ कहने लगी। स्वामिन्! आपका यहां आगमन कैसे हुआ? कौनसी बुद्धि लडाइ। चूंकि मेरी रक्षा के लिये पिताजी ने सात सौ आदमीयों

को द्वार पर वैठाये है और वे भी शस्त्र से सदा सन्नध रहते हैं। इसलिये द्वार होकर के आने में किसी की हिम्मत नहीं हो सकती, तो आप कैसे पधारे ? पहले यह वतलाईये।

कुमार ने कहा हे कामिनी ! मैं तो विद्या के बल से देव की तरह सब जगह जा आ सकता हूँ मेरे लिये कोई दुष्कर मार्ग नहीं है, ये तो सात सौ ही वैठे हैं भले सात हजार क्यों न बैठे। इन की आंखों में धूल डाल सकता हूँ।

यह सुन कुमारी चौकन्नी हो गई जरुर कोई कलावान, बलवान एवं महान् तेजस्वी पुरुष है, यदि यह मेरा पति बन जाय तो मेरा भाग्यवृक्ष फलीभूत हो जाय ऐसा मानसिक विचार कर कुमारी ने कहा हे सत्पुरुष ! परोपकारिन् ? मेरे साथ विवाह कर मुझे कृतार्थ करो और मेहरबानी करके आज ही प्रेमपाश में वंध जाना चाहिये।

प्रत्युत्तर में कुमार ने कहा हे सुन्दरी ! तुम तो विलास-वती राजकुमारी हो और मैं एक विदेशी आदमी हूँ अतः अपना सम्बन्ध कैसे हो सकता है ? दूसरी बात एक यह भी है कि स्वीकार किये हुए मार्ग को जीवन पर्यन्त निभाया जाय तब तो प्रेम करना ही श्रेयष्कर है चूंकि ऐसे पुरुष विरले ही देखने में आते हैं कि बिना करण ही हरएक से स्नेह करें, निर्धन व्यक्ति का गोरव रखें, और स्वीकृत मार्ग का यथेष्ट आजीवन पालन करें। इसलिये मेरा तो यही विनम्र निवेदन है कि प्रेम करने के पहले लाख लाख वार विचार कर लेना चाहिये।

करबद्ध कनकावती ने कहा स्वामिन् ! आज से आपका चरणारविन्द ही मेरा सहायक है, यह जीवन ही आपको उसी समय सोंप दिया था जिस समय पहले पहल ही आपका दर्शन

हुआ था। ज्यादा कहने से, और शपथ खाने से क्या ? यह जीवन जीवन पर्यन्त आपको समर्पण है आप ही मेरे हृदय के हार हो माथे का मुकुट हो, आंखों के तारे हो और मेरे दिल के तुम ही सम्राट् हो। अब चाहे आप मुझे स्वीकार करें या ठुकरावे। और आखिरी एक बात और कह देती हूँ, यदि दासी को ठुकरा दिया तो समझ लीजिये आत्महत्या का पाप आपके शिर रहेगा। ऐसा कह कर कनकावती ने रूपसेन का हाथ पकड़ लिया और रूपसेन के पास पलंग पर जा बैठी।

"जो रोगी को भावे, वो वैद्य फरमावे" रोगी की इच्छा के अनुकूल पथ्य का आदेश यदि वैद्यराज दे देते हैं तो फिर कमी किस बात की ? ऐसा ही मौका यहां मिला। रूपसेन उनको दिल से चाहता था मगर ऊपर से इन्कार कर रहा था वह भी केवल परीक्षा के लिये ही। हृदय से ठुकराता नहीं था। राजकुमारी का दृढ निश्चय समझ कुमार ने विवाह की स्वीकृति दे दी। उसी समय राजकुमारी ने चार कलश की चवरी मांड दी, दीपक को साक्षी रखा, और कुमारी ने बड़े हर्ष से रूपसेन के साथ विवाह कर लिया। प्रेम सूत में सदा के लिये दोनों बंध गये। किन्तु न तो राजकुमारी का पिता जानता है और न माता। न दास दासी, और न राजधानी का कोई कर्मचारी। इधर रूपसेन के लिये भी न तो मालण जानती है और न माली। जिस समय दोनों ने लग्न साधा, उस समय सारा संसार सोया हुआ था। चुपके से एकान्त निशा के समय दोनों प्रेमपाश में बंधकर भोग विलास, प्रेमक्रीडा वगैरह करके रूपसेन मालण के घर लौट गया। शेष रात्रि में वहां जाकर सो गया। एक दिन नहीं, दो दिन नहीं बल्कि हमेश का कार्यक्रम यही बन गया। रातभर राजकुमारी के साथ समय व्यतीत कर मालण के घर चला जाना। इसी

तरह दोनों का विनोदमय समय निकलने लगा। नीतिकार ने कहा है कि—

बुद्धिमानों का काल गीत, शास्त्र और विनोदमय जाता है और मूर्खों का काल निद्रा, झगडा और व्यसन में समाप्त होता है। एक दिन मौका देख कुमार ने कुमारी की धर्म परीक्षा के लिये कहा, आठमुख, सोलह आंख, पनरह जिह्वा, दो जीव, दो हाथ और दो पांव वाले देव को मैं नमस्कार करता हूँ, बताओ यह कौनसा देव है ? कुमारी ने बिना विलम्ब उत्तर दिया, पार्श्वनाथ। फिर कुमारी ने पूछा समुत्पन्न निर्मल ज्ञान वाले लोकालोक को देखने वाले केवली भगवान जिसको नहीं देखते हैं उसको मैंने आज देखा है, बताओ क्या चीज है !

कुमार ने झट से उत्तर दे दिया, स्वप्न। इसी तरह समस्या की पूर्ति, शकुन शास्त्र, स्वप्न शास्त्र, ज्योतिष शास्त्र, आदि नित नई वार्ता करते हुए सुखमय काल दोनों यापन करने लगे। किसी कवि ने ठीक ही कहा है कि—कला के अभ्यास से, गुण के उल्लास से, पाप को नाश करने वाली कथा से, और परस्पर हास्य विनोद से भाग्यवानों का समय जाता है, और वास्तव में देखा जाय तो संसार का मजा भी भाग्यवान ही लूटते हैं।

लोग कहा करते हैं कि भोग विलास के बाद स्त्री के शरीर की कांति बदल जाती है स्तन उपसने लग जाता है और चेहरे की शोभा भी बढने लग जाती है इसी कथनी के अनुसार कनकावती का भी शरीर बदल गया, दासियों ने कनकावती के शरीर में काफी परिवर्तन देखा, जिससे दासियें घबरा गई, यह क्या अनर्थ ! यहाँ कौन पुरुष आता है ? सब दासियों ने अपना

विचार निर्णय किया और महारानी को जा निवेदन किया और यह भी कहा, इस विषय में हम लोग अज्ञात हैं, केवल कुमारी के शरीर को देख कर हमने यह अनुमान लगाया है कि कोई न कोई पुरुष उनके पास जरूर आता है और भोग विलास कर चला जाता है। हमने तो जैसा देखा है वैसा ही आपसे निवेदन कर दिया है फिर हमारे ऊपर किसी प्रकार का दोषारोपण न हो!

यह सुन रानी भी विचार में उतर गई, सीधी जनाने में जा राजा को बुलाया, राजा को कुमारी की सब घटना कह सुनाई, राजा भी आश्चर्य में पड़ गया। यह क्या मामला है? इतने द्वारपाल होते हुए कौन पुरुष वहाँ पहुंच जाता है? राजा ने मंत्री को कहा, छ कान के बदले काफी कानों में यह आवाज पहुंच गई, चार कान की बात स्थिर रह सकती है, छ कान की बात सारे संसार में फैल जाया करती है और दो कान वाली बात का तो ब्रह्माजी भी पार नहीं पा सकते हैं। बात उड़ती हुई सारी राजधानी के कर्मचारियों के कानों तक पहुँच गई तरह तरह की बातें होने लगी। मंत्री ने राजा से निवेदन किया, महाराज! यहां सात सौ पहरेदार बैठे हुए हैं इतने लोगों की आंख में धूल डाल कर कोई भी पुरुष राजकुमारी के महल में पहुंच जाता है, इससे अनुमान करिये कि जाने वाला पुरुष कोई सामान्य नहीं होगा। महान् साहसी एवं कोई बलिष्ट है लेकिन हो सकता है कि इसमें भी कोई भेद हो। चूंकि भेद से ही किला जीता जाता है। भेद से ही राज्य का विनाश होता है, भेद के द्वारा ही घर घर में झगड़े हो जाते हैं और भेद के बल पर ही चोर लोग चोरी किया करते हैं, इसलिये मेरा तो ख्याल है कि इस में भी कोई न कोई भेद जरूर होगा। और जो भी जाता है वह अवश्यमेव कोई तेजस्वी पुरुष होगा।

यह सुन राजा का पारा एक सौ पांच डिग्री चढ़ गया, आंखें लाल बूंद हो गई, होट फरफराने लगे और बोल उठा, जाओ, उन सात सौ पहरेदारों को यहां ले आओ, उसी समय मंत्री ने सब को बुला दिये, सब के सब राजा के सामने हाजर होगये, राजा ने सब को पूछा और एक एक व्यक्ति को अलग अलग भी पूछा मगर सब का एकसा ही उत्तर मिला हजूर ! इस विषय में हम कुछ भी नहीं जानते हैं और आज ही आपके मुखारबिन्द से यह बात सुनी है, हम लोग सही अर्ज करते हैं कि हम लोग कुछ भी नहीं जानते हैं।

क्रोध से संतप्त राजा ने कहा, दुष्टों ! तुम को रक्षा का भार सौंपा है और कहते हो हम कुछ नहीं जानते हैं क्या तुम लोगों को मेरा भी भय नहीं है ? क्या जीने से नफरत हो गई है ? मैं अब तुम को शिक्षा करूंगा ! फिर तो सच्च बोलोगे इन से तो यही ठीक है कि पहले ही कह दो। ऐसा कह कर राजा ने तलारक्षक को आदेश दे दिया, इन सब को चौर की तरह दंड दो यदि कुमारी के महल में प्रवेश करने वाले पुरुष को बतादे तो छोड़ देना।

तलारक्षक यानि रिमान्ड पर लेने वाली पुलिस, उसने उन सब को लेजाकर अलग २ पीटना शुरू किया सब लोग डरते हुए ये ही शब्द कहने लगे जो कि राजा को कहा था चाहे मारे या रखें, मगर हम कुछ नहीं जानते हैं, सब के सब ठंडे ज्वर की तरह धूज रहे थे।

तलारक्षक ने पुनः राजा से निवेदन किया, हजूर ! उन का तो एक ही कहना है हम कुछ भी नहीं जानते हैं। अब क्या आदेश है फरमाईये ?

जाओ सब को शूली पर चढा दो, राजा ने बिना परिणाम सोचे ही कह डाला, इसीलिये तो कहा गया है कि राजा के कान होते हैं मगर शान नहीं, राजा के आदेश का तलारक्षक ने पालन किया, उसी समय सब को जुलुस के रूप में शूली पर चढाने के लिये लेकर के बाजार में निकला, ज्यों ही सब चौहटा में पहुँचे त्यों ही सैंकड़ों लोगों ने उसे देखा और परस्पर बातें करने लगे, अपने गांव में ऐसा एक भी दयालु पुरुप नहीं है जो कि आज इतने पुरुषों की हत्या को रोक सकें ! किसी एक दुष्ट ने अन्याय किया और सात सौ निरपराधी मारे जाते हैं यह भी कोई न्याय है ? राजा को भी कुछ तो सोचना था। इस तरह नगर में जगह जगह पर शूली की चर्चा होने लगी।

उसी नगर में वेश्याओं के सात सौ मकान थे उन वेश्याओं के कानों में भी यह समाचार पहुँच गये, यह सुन उनके हृदय में दया का सागर उमड़ पड़ा और उसी समय सब वेश्याओं इकट्ठी होकर विचार विनिमय कर राज दरबार में पहुँच गई और राजा से मुख्य वेश्या ने निवेदन किया राजन् ! किसी धूर्त्त ने यह सरासर अन्याय किया है किन्तु व्यर्थ के सात सौ आदमी मारे जा रहे हैं; अन्याय कोई करे और दंड दूसरा ही भोगे यह कौनसा न्याय है ! रात में पुरुप खाट पर सोता है और खटमल काट चला जाता है और कहीं छिप जाता है लेकिन पुरुप उस खटमल के बदले खाट को मारपीट करता है ठीक वैसा ही यह मामला बना है, हुजूर ! जरा सोचिये।

राजा ने कहा बिना किया हुआ पाप तो किसी को नहीं लगता है जैसा भी मानव कर्म करता है वैसा ही फल भोगना पड़ता है "जहर कोई पीवे और मरे दूसरा" यह न तो कभी

बना है और न बनेगा। ये लोग दंड के योग्य हैं और मैंने दंड दिया हैं मैंने जरा भी बुरा नहीं किया है।

वेश्या ने कहा हजूर ! आपका कहना यथार्थ है फिर भी सोचिये सात सौ गुन्हेगार नहीं हो सकते, हो सकता है कि इनमें से भी कोई एक हो, अथवा कोई बाहर से भी आया हो यह भी बन सकता है। इसलिये आप से हमारा यह निवेदन है कि एक मास के लिये इन सब को छोड़ दीजिये. क्योंकि एक महिने में उस दुष्ट को हम पकड़ लावेंगे जो कि राजकुमारी के महल में जाता हो। और आपके सामने पेश करेंगे। यदि हम हाजर न कर सकें तो सात सौ पहरेदार के साथ हम लोगों को भी शूली पर चढा दीजिये। यह हम आपके सामने प्रतिज्ञा करते हैं, और यह शर्त है कि इन सब को एक माह के लिये पहले अभयदान दे दीजिये।

यह सुन राजा बड़ा प्रसन्न हुआ, और सब को छोड़ दिया। नागरिक प्रजा भी इस संदेश से बडी प्रसन्न हो गई। वेश्याओं की प्रतिज्ञा भी सारे गांव में प्रसिद्ध हो गई। नवीन बात वायु वेग जल्दी फैल जाया करती है। वैसे ही वेश्याओं की प्रतिज्ञा के साथ भूरि भूरि प्रशंसा भी होने लगी। यानि जगह जगह पर वेश्याओं की खूब तारीफ होनी शुरू हो गई।

उनके बाद सब वेश्याओं ने एक सभा का आयोजन किया खूब विचार कर एक होशियार और चालाक वेश्या को यह कारवाई सोंपी गई, जैसा भी वह आदेश दे सब को मंजूर करना होगा। इस शर्त पर उसने भी सब भार अपने शिर पर ले लिया उसने अपनी बुद्धि से काम प्रारंभ किया। सर्व प्रथम राजकुमारी के महल में तथा उनके सोने के पलंग के चारों ओर सिन्दूर

बिखेर दिया और दास दासी को भी कह दिया कि रात में खुब सावधानी से रहना और नीचे द्वार पाल को भी यही सूचना दे दी। वह अपने घर जाकर दूसरा मार्ग सोचने लगी।

वेश्या के कहने के अनुसार सब लोग पूर्ण सावधान रहते हैं किन्तु रूपसेन तो नियत समय पर राजकुमारी के महल में दाखल हो गया। उसे देखते ही राजकुमारी ने हाथ जोड़ निवेदन किया। स्वामिन्? आज तो एक दो नहीं बल्कि सात सौ वेश्याओं ने आपको पकड़ने की प्रतिज्ञा राजसभा में की है। हंसते हुए कुमार ने कहा यह मैंने सुन लिया है। इस के लिये डरने की कोई जरुरत नहीं है निश्चित रहो। कुमारी ने पुनः कहा स्वामिन? आप का कहना कुछ ठीक है मगर यहां पल्यंक पर तथा उनके चारों ओर सिन्दूर छांट गई है न मालूम इससे क्या होगा? यह मुझे चिन्ता है इसलिते आप पूर्ण सावधान होकर यहां विराजे और कोई उपाय सोचिये जिससे अपना कुछ भी न बिगाड़ सकें। कुमार ने कहा वास्तव में स्त्रियां बहुत डरपोक हुआ करती है मैं बैठा हूँ वहां तक तुम को भय नहीं रखना चाहिये। इस तरह परस्पर प्रेम की बातें कर रूपसेन मध्यरात में मालण के घर लौट गया। सिन्दूर के कपड़े बदल कर सुन्दर साबू से स्नान कर बहुमूल्य आभूषणों को पहन सो गया। प्रातः काल उठते ही नगर में घूमने लगा। और तरह तरह की नगर में अफवाहें सुनने लगा।

वेश्या उषा के समय राजकुमारी के मकान में पहुँच गई देखा तो पुरुष के पग सिन्दूर में मंडे हुये थे पद चिह्न के अनुसार उस पुरुष को ढूंढने के लिये वह वेश्या नगर में चारों ओर घूमने लगी। तमाशा करती हुई थक गई नगर उस पुरुष का पता नहीं चला सो नहीं चला। प्रतिदिन रूपसेन राजकुमारी के महल में प्रेम क्रीड़ा कर लौट जाता है और वेश्या भी हमेशा अपनी नित नई

बुद्धि की कसोटी करती रहती है। होते होते एक कम तीस दिन निकल गये। अपनी प्रतिज्ञा सिर्फ चौवीश घंटा बाकी रही सब वेश्याएं पुनः इकठी होकर सोचने लगी। अब क्या करे "सूती बैठी डोकरी ने घर में गाल्यो वोड़ो" यानि दूसरे की आपत्ति व्यर्थ अपने ले ली। यह तो वैसा मौका हो गया जैसा कि रीछ पकड़ने वाले पुरुष को हुआ था। जब एक ने कहा कि वह कथा सुना दो। तब एक वेश्या ने कहना शुरु किया।

एक राजगृही में रहने वाला कोई बड़ा व्यापारी था वह धन लेकर के विदेश रवना हुआ कारण कि वहा दुकान लगाना चाहता था थोड़ा दूर जाने पर एक भयानक जंगल आगया वह भी बहुत लम्बा चौड़ा न तो उस मार्ग से कोई मानव जाय और न कोई पत्तीगण। अचानक रीच्छ का आना हो गया उसे देख शेठ थर थर कापने लगा। ज्योंही रीच्छ ने उस पर आक्रमण किया त्योंही शेठ ने उसका कान पकड़ लिया फिर भी भलूक शेठ को मारने के लिये जोर लगाने लगा मगर शेठ मजबूत था उसने भी जोर जोर से कान दवाना शुरु किया जोर के कारण कमर पर बन्धी हुई रुपयों की नौली टूट गई और उसमें से सोना मोर एक एक करके जमीन पर पड़ने लगी।

इतने में सामने से एक व्यक्ति का इधर से निकलना हुआ उसकी दृष्टि शेठ और रीछ पर जा पडी सोना मोर को देख उसका जी ललचाया और नजदीक आते ही शेठ को पूछा भाई! तुम यह क्या करते हो और यह कौनसा जानवर है? शेठ उत्पातिकी बुद्धिवाला था उस व्यक्ति का प्रश्न सुन शेठ ने उत्तर दिया भाई आप को क्या बताउं लेकिन वताना ही पड़ेगा। यह जंगल का रीछ है इसके कान दबाने से टटी के रास्ते सोना मोर

देता है इसलिये मैं कान दबा रहा हूँ देखिये तो सही मेरे पीछे कितनी मोरे पड़ी है। मेरे झूठ बोलने का तो सदा नियम है।

आगन्तुक व्यक्ति ने प्रत्यक्ष सोना मोर अपनी आंखो से देखी और सुन भी लिया फिरतो उसका जी ललचाये बिना नहीं रह सकता। उसने प्रार्थना की भाई तुम तो बड़े परोपकारी हो महेरबानी करके यह जानवर मुझे दे दो। जिससे मुझे भी थोड़ा धन मिल जायगा। और आप का उपकार जीवन भर नहीं भुलूगा बहुत कुछ आग्रह होने पर शेठ ने रीछ के कान उसे पकड़ा दिया। शेठ अपनी सोना मोर ले आगे चलने लगा। वह व्यक्ति उसका कान जोर जोर से दबाने लगा ज्यों ज्यों कान दबाता है त्यों त्यों रीछ उस पर आक्रमण करने लगा। तब उसने शेठ को पूछा भाई यह तो मोर के बदले मुझे मारना चाहता है। तब शेठ ने कहा यदि मोर न दे और मारना चाहें तो इसको छोड़ दे जंगल में चला जायगा। ऐसा कह शेठ तो चंपत हो गया। मगर वह न तो छोड़ सकता है और न उसे पकड़ सकता है। आखिर कब तक पकड़े और छोड़े तो मारने का भय इसलिये शेठ व्यर्थ के लोभ में पड़ कर आपत्ति में फस गया। वैसे ही कुमारी के बारे में अपने सब आपत्ति में फस गई है। अपने कीर्ति की बांछा से दूसरे का दुःख माथे लिया। अब राजा के पास कैसे छुटेगें? लेकिन उपाय के बल पर जो कार्य होता है वह बल से कदापि नहीं हो सकता कला से ही अब काम हो सकेगा। इसलिये तो कलावान ही संसार में पूजनीय होता है और वही सब का शिरताज है। मगर राजा के सामने कला क्या करेगी? वह तो गुस्सा में बैठा होगा इस प्रकार सात सौ वेश्याएं और सात सौ ही पहरेदार सब चिन्ता में पड़ गये।

राज महल के झरोखे में बैठ राजा सोचने लगा एक मास

की मीयाद मांग कर वेश्या ने भी ठगाई का धंधा शुरु किया दीखता है एक मास आज पूरा हो गया। मगर वेश्याओं के आने का अभी तक कोई पता नहीं। इस पर राजा धूंआ फूआ हो गया और सीधा राजसभा में जा कर्मचारी को आदेश दिया जाओ वेश्याओं को जल्दी बुला लाओ उसी समय कर्मचारी वेश्यावास में पहुंच गया और मुख्य वैसा को राजा का आमंत्रण सुना दिया उसने भी सब वेश्याओं को बुलाई और राजा का हुक्म कह सुनाया सब के हृदय में वज्र पड़ गया हो इतना दुःख पैदा हुआ। मगर करे भी तो क्या? जान बूझ कर दूसरे का दुःख माथे लिया। शोकातुर हृदय से राज सभा में जाना प्रारंभ किया रास्ते में अनेक प्रकार की तर्क वितर्क करती हुई सब वेश्याएं समय पर राजा के सामने जा प्रणाम कर खड़ी हो गई बोलने की तो हिम्मत न थी किन्तु चूप चाप खड़ी खड़ी राजा के मुख को देखने लगी।

राजा ने सिंह गर्जना की एक मास की अवधि आज समाप्त हो रही है बोलो तुम्हारा क्या समाचार है? धूजती हुई एक वेश्या ने कहा हजूर? हम अपनी प्रतिज्ञा को पूरी नहीं कर सकी अब जो भी आज्ञा हो फरमाईये। राजा ने तलारक्षक को बुलाया और आदेश दे दिया इन वेश्याओं को तथा सब पहरेदारों को शूली पर चढ़ा दो। इस के लिये अब मुझे पूछने की जरूरत नहीं है। और इन के घर पर सरकार का कब्जा हो जाना चाहिये।

इस तरह राजा के आदेश को सुन सारी सभा स्तब्ध हो गई और सोचने लगी। माता ही पुत्र को विष दे दे पिता ही पुत्र को वेच दे और राजा ही सर्वस्व का हरण कर ले तो अब शिकायत कहां करना? यह तो राजा ने अत्यन्त अनुचित व्यवहार किया एक दो नहीं बल्कि चौदह सौ जीवों की एक साथ हत्या ?

राजा का यह अनुचित आदेश सारे शहर में फैल गया स्थान स्थान पर लोग यही चर्चा करने लगे किसी एक व्यक्ति ने व्यभिचार किया और इतने लोग व्यर्थ के मारे जा रहे हैं कितना अनर्थ ? छी छी राजा के इस कर्त्तव्य को लाखों बार धिक्कार हो। यह तो वैसा अनर्थ हो रहा है जैसा कि सीता को अकेला रावण ले गया था लेकिन क्रोधित हनुमान ने हजारों राक्षसों का वध कर दिया ठीक वैसा ही यह प्रसंग बना है।

मंत्री ने करबद्ध राजा से प्रार्थना की हजूर ? इन वेश्याओं को शूली देना महान् दोष है और बड़ा अनर्थ होगा। चूंकि शास्त्र में स्त्री जाति का वध सर्वथा निषेध है और यहां तक नीति में कहा है कि श्रमण, गाय, वेश्या, स्त्री, बाल, योगी, बूढा, रोगी, और ब्राह्मण इतने प्रकार के जीवों की हत्या कदापि नहीं करनी चाहिये.

मंत्री के वचन पर राजा ज्यादा कुपित हो गया, और मंत्री को भी कठोर वाणी में खुब फटकारा और डाटा। जिससे कि मंत्री का अपमान हो जाय। फिर भी मंत्री ने विनम्र शब्दों में पुन कहा—महाराज ? मैंने तो अच्छा के लिये ही कहा था, चूंकि आपके लिये हित की बात कहने का मुझे अधिकार है भले वे बातें खारी जेर क्यों न हों। जिसमें आप तो मेरे को अपशब्द सुना रहे हैं, यह आपके लिये शोभास्पद नहीं है। चूंकि कर्कश वाणी से परिवार विरक्त हो जाता है, और परिवार विरक्त होते ही आपका प्रभाव खत्म हो जायगा इसलिये आप को खुब सोच कर बोलना चाहिये। फिर जैसी इच्छा।

राजा की आज्ञा के मुताबिक तलारक्षक उन सब को जुलुस की तरह लेकर के बाजार में होकर के आगे बढने लगा।

यह दृश्य देख नागरिक प्रजा में हाहाकार मच गया। कई एक लोग करूणा से रोने लग गये और कई एक परस्पर यों बोलने लगे। अरे? इन चोरों की संगति न करो, चोरों के संग से अच्छा भी बुरा बन जाता है, देखो तो सही, किसी एक दुष्ट ने कुमारी के साथ अन्याय किया होगा और दन्ड चउदह सौ को भोगना पड़ रहा है यह कितना अन्याय! और कितना अनर्थ?

व्यापारी के वेश में घूमता हुआ रूपसेन कुमार अचानक बाजार में आ गया। लोगों के मुख से हाहाकार शब्द सुना और एक ही साथ इतने को शूली दी जायगी यह दृश्य देख रूपसेन का हृदय द्रवीभूत हो गया, एकदम दया का सागर उमड़ पड़ा।

इस विनश्वर जगत में जीवदया के समान कोई धर्म नहीं है और सब प्रयत्न से जीवदया पालन करना मेरा फर्ज और धर्म है। चूं कि हिंसा के समान संसार में कोई पाप नहीं है। हिंसक व्यक्ति नरक का अधिकारी है और अहिंसक स्वर्ग का। पुराण वगैरह में भी लिखा है कि अनेक शास्त्रों का मनोमंथन करके तत्व के रुप में परम ऋषियों ने दान के उत्कृष्ट चार मार्ग बताये हैं। भयभीत को अभयदान, रोगी को औषधदान, विद्यार्थी को विद्यादान, और भूखे को अन्नदान देना चाहिये, चूंकि अभयदान से वह निर्भिक होकर के अपने काम में डटा रहेगा, ज्ञानदान से वह ज्ञानी बन कर सबका उद्धार करेगा, औषधदान से वह निरोगी बनेगा। जिससे परोपकार सेवा इत्यादि सुकृत कार्य करता रहेगा। और अन्नदान से मानव-क्षुधा से शान्त हो जायगा जिससे वह पापाचरण से बच जायगा। इसी तरह मेरा भी परम कर्त्तव्य है कि इन सब की रक्षा करूं।

चूंकि अन्याय कर्त्ता मैं हूँ और दन्ड विचारे इतने व्यक्तियों को भोगना पड़े, यह कैसे बन सकता है? दूसरा यह भी है कि एक स्त्री हत्या का पाप भी भयंकर माना है, जिसमें भी सात सौ स्त्रियों का वध? और वे भी वेश्या। इतना वध मेरे सामने किया जाय। और मैं देखूं? धिक्कार हो मुझे? फिर मेरे जीने से क्या। जीवन तो वही सार्थक है कि जिससे परोपकार किया जाय। ऐसे तो विष्टा का कीड़ा भी जीना चाहता है, मगर उससे कुछ भी भला नहीं हो सकता। यदि मैं किसी तरह का भला न करूं तो मेरे में और उनमें फर्क क्या? व्यर्थ मेरे निमित्त में इतने जीवों की हिंसा? इन सबको छोड़ाना मेरा परम कर्तव्य है ऐसा सोचकर पापभीरू रूपसेन कुमार मालण के घर जा सिन्दूर वर्णा वस्त्र पहन कर, बाजार में हो राजसभा में जाने के लिए रवाना हुआ, मार्ग में हजारों लोग उसको देखने लगे, ऐसा वस्त्र क्यों पहना है? किन्तु वह तो बड़ी मस्तानी चाल से आगे बढ़ता ही चला। राज महल के द्वार पर पहुंचते ही प्रतिहारी को कहा, जाओ, राजा को पूछो, मैं दर्शन करना चाहता हूँ। द्वारपाल ने राजा से यह निवेदन किया कि कोई विदेशी दर्शनार्थी द्वार पर खड़ा है। क्या आदेश है फरमाईये? राजा ने कह दिया, ले आओ।

द्वारपाल उसे ले राज सभा में गया, कुमार ने बड़े प्रेम से झुक २ कर प्रणाम किया। और योग्य स्थान देख बैठ गया। कुमार के शरीर की काँति तथा चमकदार ललाट को देख लोग इस तरह विचारने लगे। क्या यह कोई विद्याधर है या देव है? अथवा क्या साक्षात कामदेव ही यहां आ गया? रूपसेन का शरीर ही सुन्दर था। जिसमें भी सिन्दूर वर्णा वस्त्र धारण करने से काँति चौगुनी बढ गई। मुख्य वेश्या ने सिन्दूर के कपड़े वाले कुमार को देख राजा से कहा, हजूर? यही पुरुष

राजकुमारी के महल में प्रतिदिन जाया करता है और उनके साथ अनाचार सेवन करता है। यह सुन केवल राजा ही नहीं बल्कि सारी प्रजा भी आश्चर्य में डूब गई। राजा ने वेश्या को पूछा! तुमने कैसे जान लिया कि यह वही पुरुष है। वेश्या बोली महाराज? कुमारी के महल में मैंने सिन्दूर का षड्यंत्र बना रखा था और वही रंग इसके कपड़े के हैं अतः अवश्यमेव यह वही पुरुष है। इसमें यदि आपको शंका है तो इन्हीं से पूछ कर रफा कर लिजिये।

राजा ने कुमार को कहा, वेश्या क्या कहती है? और इसके लिये तुम्हारा क्या जवाब है? कुमार ने बड़े ठाठ से निर्भिक होकर उत्तर दिया, महाराज? वेश्या ने जो कुछ कहा है वह बिल्कुल सही है। आपके बिना कहे ही मैं राजकुमारी के महल में गया और न केवल राजविरुद्ध ही अपितु लोक विरुद्ध भी कार्य मैंने किया है, अन्याय का पात्र मैं हूँ और ये सब निर्दोषी है अतः इनको मुक्त कर मेरे को दंड दीजिये। लेकिन यह शर्त है कि दंड देने के अधिकारी आप हैं और लेने का मैं हूँ मगर सर्व प्रथम इन को छोड़ दीजिये।

यह सुन सारी सभा चिन्ता करने लगी, तेल में माखी की तरह यह कहां से टपक पड़ा? किन्तु यह भी कोई सामान्य आदमी नहीं बल्कि पूरा साहसी एवं पराक्रमशाली दीखता है, तभी तो राजा के सामने स्वयं दंड लेने आया है, मुख भी बड़ा प्रसन्न है मृत्यु का तो इसे भय भी नहीं लगता है, वास्तव में संत पुरुष आपत्ति में पड़ जाने पर भी कायरता को धारण नहीं करते हैं; जैसे सोने को तपाने पर प्रकाश देता है वैसे ही संत की कसौटी होने पर प्रसन्न रहते हैं, शख को अग्नि में देने पर भी श्यामता के बदले उज्वलता ही विशेष धारण करेगा। महात्मा

पुरुषों की भी ऐसी ही प्रकृति हुआ करती है कि विपत्ति आने पर विशेष धैर्यवान बन जाते हैं। और तीव्र पुण्योदय के कारण धन, बुद्धि खूब मिलने पर भी गर्व न करके बडे शान्त रहते हैं। नीतिकार ने कहा है कि सभा में वाणी की पटुता रखे, रण में धीर वीर बन जाय, यश में अधिक रुचि रखे और व्यसन तो केवल शास्त्र पठन, श्रवण अथवा आत्म चिन्तवन में रखे, वही महात्मा पुरुष माना गया है और यह कुमार भी कोई सज्जन एवं महात्मा पुरुष दीख पड़ता है। इस तरह सारी सभा मन ही मन विचारने लगी।

इतने में वेश्या ने कहा महाराज! मेरी बात सही है यही चोर है क्योंकि नीतिकार के अनुसार चोर के लक्षण इसमें पाये जाते हैं जैसे कि धृष्ट, दुष्ट, पापीष्ठ, निर्लज्ज, निर्दय, कुधी, निडर और क्रूर इतने लक्षण वाला चोर माना गया है, यह भी बड़ा धृष्ट यानि घेठा है एक तो गुन्हा सरकार का किया है और ऊपर से निर्लज्ज एवं निर्भय की भांति जवाब सवाल कर रहा है, हजूर! आपका भी इसे भय नहीं, और सभा की शर्म तक नहीं?

वेश्याने राजा को ऐसा उत्तेजित किया कि राजा का दिमाग बेकाबू हो गया। क्रोधान्ध बन राजा ने उसी क्षण तलारक्षक को बुला कर आदेश दे डाला, जाओ, इस दुष्ट को बिना विलम्ब नगर में विडम्बना पूर्वक घूमा कर शूली पर चढा दो, क्योंकि पाप का फल इन को यहां पर भोगने दो, दुनिया भी देखेगी कि अन्याय करने वाले की ऐसी दशा हुआ करती है। और पापी आत्मा को इस तरह का दंड भोगना पडता है नीति में लिखा है कि दुष्ट, दुर्जन, पापी, क्रूर कर्म करने वाले, और अनाचारी पुरुष को पाप का फल यहां पर ही मिलना चाहिये। तलारक्षक ने कहा, हजूर! आप का आदेश प्रमाण है।

रूपसेन ने राजा को पुनः कहा हजूर ! पहले इन लोगों को तो छोड़ दीजिये में तो आपके आदेश का सहर्ष पालन करुंगा। उसी समय राजाने सब को छोड़ दिये, वे भी रूपसेन को धन्य-वाद देते हुए बड़े प्रसन्नचित से अपने अपने स्थान की ओर लौट गये। और यह खुशी के समाचार सारे नगर में वायु वेग फैल गये। परस्पर यही कह कर संतोप मान लिया कि चउदह सो जीवों के वध के पाप से राजा बच गया यह अच्छा हुआ।

तलारक्षक रूपसेन को लेकर के चौहटा में पहुँचा रूपसेन को देख कईएक लोग दया करने लगे कईएक लोग नीन्दा भी करने लगे। कोई यूं भी कहने लगे दीपक में पतंग की तरह बिचारा फंस गया है। कीचड़ में मच्छली की भांति हाथी फस जाता है, धीवर की पाश में मृग फंस जाता है, ठीक वैसे ही बिचारा भोला रूप सेन फस गया है। कोई ऐसे भी बोलने लगे, विचारे का क्या दोप है। कर्म की प्रेरणा के अनुसार मानव सुख दुःख भोगता है इसके भी कोई अशुभ कर्म का उदय हुआ है। वरना ऐसा चतुर आदमी राजविरुद्ध काम क्यों करें। दुनियां को कोई नहीं रोक सकता, दुरंगी दुनिया इसीलिये कहा है कि कभी इधर और कभी उधर, दोनों तरफ बोल जाया करती है।

तलारक्षक तो राजा के आदेश के अनुसार दिन भर शहर में घूमा कर लगभग शाम के समय उसे वध्यभूमि पर ले गया। रूपसेन भगवान का स्मरण कर रहा था मानसिक जाप पूर्ण रुपेण करता जा रहा था इसके मन में किसी वस्तु की कामना भी न थी। किन्तु एक बात की खटक जरुर मन में थी, वही की अन्तिम वख्त में राजकुमारी को कोई सदेशा देकर के नहीं आया। खेर ! उन का भाग्य उन के पास। एक दूसरे के कोई साथ नहीं चलता है भले वह प्राणप्यारी हो अथवा प्राणनाथ हो

आखिर यमराज के दरबार की यात्रा तो एकेले को ही करनी पडती है इस लिये व्यर्थ संताप करने से क्या ? मेरा साथी मेरा आत्म धर्म है और वही मुझे भवो भव में सहायक हो उसी से मेरा उद्धार होगा ऐसा चिन्तवन कर नमस्कार महामंत्र पूर्णश्रद्धा से बोलने लगा। तलारक्षक ने संध्याके समय वध्य भूमि पर लेजा कर पूछा और कोई मन में कामना है ? इस दृश्य को देखने में असमर्थ सूरज भी अस्ताचल पर्वत की ओट में जा छीपा। रूपसेन जाप में एका कार बना हुआ था और तलारक्षक ने उसे शूली पर·········· ······। राजा के पास जा निवेदन कर तलारक्षक अपने घर चला गया।

उसी समय कुमार को शूली चढाने की बात फैलती हुई मालण के कानों तक पहुँच गई। बहुत दुःख हुआ। खेद करने लगी। हे देव ! तुमने इतना निठूर काम किया। महान् उत्तम पुरुष को राजा के द्वारा इतना कठोर दंड ? धिकार हो तुमें ! और राजा को भी ! कम से कम राजकुमारी को भी पूछना तो था उन की क्या इच्छा थी और वह कैसे उन के पास आता था जानकारी तो कर लेनी चाहिये थी। मालण बार बार उनके गुणों को याद करती हुई रो देती थी और सब को उपालम्भ भी देती थी आम्बे का गुण कोयल विशेष रुप से गाती है, भंवरा कमल का गुण गाता रहता है, हंस मान सरोवर का गुण गाया करता है ठीक वैसे ही मालण रूपसेन के गुणों को बार बार गाने लगी।

मालण ने अपने स्वामी माली को कहा स्वामिन् ? इस कुमार ने धन दौलत देकर के अपने उपर अथाग उपकार किया है, इसलिये अपने भी उपकार का कुछ बदला दे सकें तो अच्छा रहेगा चूंकि संसार में धनवान तो बहुत है मगर उदार दिलवाले

विरले ही मिलते है इसी तरह इस कुमारने तो औदार्य गुण से अपना दिल जीत लिया है इसलिये आप यह डंडा लेकर के वहां जाओ और परोपकारी पुरुष को जीन्दा कर के घर ले आओ। रात का समय है अंधकार चारों ओर व्याप्त है कोई देख भी नहीं सकता। इस डंडे से धीरे धीरे तीन बार उनके सरीर से स्पर्श करना जिस से वह ठीक हो जायगा। पुराण में भी लिखा है कि परोपकार प्राण से अथवा धन से भी करना चाहिये परोपकार करने में जितना पुण्य बताया है उतना पुण्य सौ बार यज्ञ करने पर भी नहीं मिलता। जिस के हृदय में परोपकार की भावना है उनके लिये पद पद पर निधान भरा हुआ है और विपत्ति तो उन से सदा दूर भागती है अतः आप विलम्ब न करें जल्दी से जल्दी पधारें।

यह सुन माली ने कहा हे प्रिये! तूने कहा तो ठीक है मगर अभी तू भोली है दुनियां की हवा तेरे नहीं लगी है। स्त्रियों की बुद्धि भी पीछे हुआ करती है मैं वहां जाउं और यदि गुप्त कर्मचारी के द्वारा राजा जान ले तो मेरी क्या दशा होगी? उन की तरह मैं भी शूली पर चढ जाउं? ऐसा राजविरुद्ध कार्य तो मैं हरगिज नहीं करता। यह सुन मालण ने पुनः निवेदन किया स्वामिन्? यह उपकार का बदला देने का अच्छा मौका है, जीवितदान के समान संसार में कोई पुण्य नहीं है बडा भारी लाभ का सुयोग मिला है तीर्थस्नान से, खूब दान देने से और तीव्र तपस्या करके जो पुण्य उपार्जन किया जाता है उनसे अनंत गुणा पुण्य जीवितदान देने में है। इसलिये स्वामिन्! साहस करके वहां पधारो, अवश्य काम सफल हो जायगा। इस तरह बार बार कहने पर भी उसने साफ साफ इन्कार कर दिया मुझे तो जीन्दा रहने की इच्छा है, मैं तो हरगिज वहां नहीं जाउंगा।

ऐसा माली का निश्चय जान मालण ने कहा प्राणनाथ ? यदि आप वहां नहीं जाना चाहते हैं तो आप इतना काम तो जरुर करो, आज बाहर घूमने न जाकर घर बैठे रहना, मैं वहां जाउंगी आप घर की रक्षा करना। ऐसा कह कर हाथ में जादुई दंडा लेकर के रात्रि का अंधकार फैल जाने पर अकेली मालण हिम्मत पूर्वक वहां गई, जहां रूपसेन शूली पर लटक रहा था।

शूली पर उसे देख मालण के हृदय में बडा आघात लगा कठोर हृदय करके कहा, भाई ! ओ भाई ? ऐसे तीन चार बार बोलाया मगर न बोला, तब मालण ने चारो तरफ दृष्टिपात कर देखा, कुमार के होठ पर गहरा फेन आया हुआ था और बिल्कुल अचेतनावस्था में था, मालण ने दंडे से उसके शरीर को धीरे से स्पर्श किया, एक बार के स्पर्शमात्र से ही कुमार ने जृंभा ली, दूसरी बार दंडे का स्पर्श होते ही कुमार की आंखे खुल गई इधर उधर देखने लगा। मालण को इससे खूब संतोष हुआ और प्रेम से तीसरी बार दंडे से फिर स्पर्श किया जिससे निद्रा से कोई उठता हो वैसे ही रूपसेन उठ खड़ा हुआ और मालण के चरणों में गिर पड़ा, उसने प्रेम से सुन्दर आशीर्वाद दिया ! और भाई को छाती से लगा दिया और कहा, भाई ! तुम्हे यहां कितना दुःख हुआ था ?

बहन ! मुझे तो निद्रा आ गई थी जिससे दुःख का कुछ भी मुझे अनुभव नहीं हुआ किन्तु तुमने मेरे ऊपर महान उपकार किया है ऐसा कुमार ने कहा और यह भी कह दिया अब जल्दी घर चले जाना चाहिये। चूंकि यदि यहां कोई राजपुरुष गुप्तरीति से किसी जगह छीप कर बैठा होगा तो फिर संकट में पड़ जायेगें उसी समय दोनों भाई बहन ठाठ से माली के घर पहुँच गये। फिर मालण ने भाई को कहा कुमार खेद मत करना मान भंग सो

उन पुरुषों का होता है जिनकी नगर में बड़ी प्रतिष्ठा हो और उन्नति हो तुमको न तो राजवर्ग पहिचानता है और न प्रजा ही। तुम कौन हो और कहां के हो। यह कोई बच्चा भी नहीं जानता है इसलिए खेद का त्याग कर बड़े प्रसन्नचित्त से यहां रहो।

रूपसेन जीवित लौटने के कारण माली भी बड़ा आनंदित हुआ वास्तव में मेरी पत्नी का प्रयत्न पूर्ण सफल रहा फिर रूपसेन को कहा कुमार ? तेरा भाग्य बलवान है जिससे कष्ट से बच गया। कुमार ने कहा यह तो आप लोगों की कृपा का फल है आप लोगों की दया से मैं कष्ट से मुक्त हो गया पृथ्वी की शोभा भी आप जैसे परोपकारी पुरुषों से ही है ऐसे पुरुष विरले ही हुआ करते हैं कि घर आये हुए को आलम्बन दे विपत्ति में पड़ जाने पर उन का उद्धार करें और शरणागत की अपने प्राणों से भी रक्षा करें। निर्गुणी जन पर भी संत लोग दया करते हैं चंद्रमा चंडाल के घर भी प्रकाश देता है अर्थात् उत्तम पुरुष के मन में छोटे बड़े का भेद भाव नहीं हुआ करता है वे तो सब समान की दृष्टि से ही देखते रहते हैं। आप भी तो हमारे लिये महान पुरुष हैं।

माली ने कहा कुमार यह तो तुम्हारे धर्म का प्रभाव है और जीवन में किया हुआ धर्म ही फलीभूत हुआ है इसमें हम लोगों ने कुछ भी उपकार नहीं किया है ! इस तरह नानाविध बातें करते हुए सारी रात समाप्त की प्रातःकाल हो गया सूर्यदेव अपने सहस्र किरण रूप अनुचरों को साथ ले पृथ्वी पर दौरा करने के लिये निकल पड़ा।

कुमार ने मालण को कहा बहन ? अब तू पुष्पों का हार वगैरह लेकर के राजकुमारी के महल में जा वहां जाने के बाद

कुमारी के हर्ष विषाद की परिक्षा करना। यदि यह मेरे से सच्चा प्रेम रखती होगी तब तो वह दुःखी होगी और संताप करती होगी और यदि वह शोक के वदले खुशी मनाती होगी तब तो उसके पास जाने म कोई प्रयोजन नहीं है। जब कि मेरे विरह में शोकातुर बैठी हो तब तो शाम को मैं वहां जाकर उसे प्रसन्न कर दूंगा। जहां प्रेम हो वहां जाना चाहिये क्योंकि नीति में कहा कि पानी का गुण शीतलता है भोजन का गुण रस और तृप्ति है। लक्ष्मी की शोभा दान है और स्त्री का सार या शोभा अनुकूलता में है इसलिये तू सर्व प्रकार से उसकी परीक्षा पूरी लेना कि मेरे ऊपर उसका कितना अनुराग है? वापस जल्दी लौट आना और मेरे को सही बातें बता देना।

कुमार के कहने के अनुसार ही मालण सुन्दर पचरंगा हार करंडिया में ले राजकुमारी के महल में पहुँच गई मालण को देख राजकुमारी ने कहा अरे सखि? आज यह हार लेकर के क्यों आई? आज हार का समय में हार गई हूँ। इस समय पहनने का अवसर नहीं है तुम मेरे जीवन तुल्य सखि हो मेरे हृदय के दर्द की सब बातें तुम्हें सुनाना चाहती हूँ सुनो। कल मेरे पतिदेव को राजा ने शूली पर चढा दिया है उस पति के विना मेरा जीवन विष तुल्य हो गया है। न तो खाया जाता है और न पानी पीया जाता है इसलिये अब मैं जीवित नहीं रह सकूंगी। सारी रात मुझे नीन्द नहीं आई केवल स्वामी की चिन्ता में पड़ी हूँ। मैं आज की रात में चाहें तो विष भक्षण से अथवा गले फांसी लगाकर के आत्म हत्या करूंगी क्योंकि मेरे पर देव रूठ गया है जिससे मेरा सर्वस्व हर लिया। अर्थात मेरे प्राणनाथ को उठा ले गया पति के विना क्षण मात्र भी मुझे चैन नहीं पड़ती है उसको मैं लेशमात्र भी नहीं भूल सकती। इसलिये

हे सखि ? इतने दिनों में मेरा जो कुछ भी अपराध हुआ हो वह सब क्षमा कर देना। मैं निश्चय पूर्वक कह रही हूँ कि रात में प्राणत्याग दूंगी। मालण को इस प्रकार कहती हुई चौधारा आंशुओं से रोने लगी और पवन को भी सम्बोधन करने लगी। हे पवन ? मुझे उसी दिशा में तूं लेजाना जिस दिशा में मेरा हृदय सम्राट् गया हो। संसारी जीवों के लिये दुःख का मूल कारण तीन बताया है स्नेह, लोलुपता और लोभ। स्नेह चाहे किसी के साथ क्यों न हो जब वियोग का प्रसंग आता है तब दुःख के बादल छा जाते है। व्याधि का मूल जीभ की लोलुपता। रसनेन्द्रिय पर काबू किया जाय तभी व्याधि मिट सकती है आज का संसार रसनेन्द्रिय का पूर्ण गुलाम बन गया है इसीसे ज्यादा मानव बीमार पड़ते है और डाक्टरों की संख्या में दिन दूनी रात चौगुनि वृद्धि होती जा रही है इसलिये सर्व प्रथम खाने की लालसा कम की जाय। और तीसरा मूल लोभ है। जहां लोभ ज्यादा है वहां अनर्थ ही अनर्थ होता है और पाप का बाप ही लोभ कहा है। इसलिये स्नेह, लोलुपता और लोभ इन तीन कारणों से ही मान दुःखी बनता है। सब से ज्यादा दुःख स्नेह का है स्नेह करना तो सहज है मगर निभाना अथवा छोड़ना बड़ा कठीन है। उपरोक्त तीन कारणो को सर्वथा मानव त्याग दें तो संभव है मानव कदापि दुःखी न बनें।

धू सके धू सके रोती हुई राज कुमारी को देख मालण ने कहा बहन ? कुमौत से मरना तो कदापि उचित नहीं। हे सखि ? यदि मेरा कहना मनोगी तो एक बात कहूँ सबसे पहले तो यही है कि मरने का विचार दिल से हटा दो। क्योंकि जीवित व्यक्ति कल्याण का मार्ग देख सकता है यदि तुझे मेरे पर विश्वास न हो तो एक कथा सुन लीजिये उनके पश्चात् जो भी इच्छा हो कर लेना।

किसी एक नगर में एक राजा रहता था उस का एक मंत्री था जिसकी पत्नी का नाम था गंगा। वह वास्तव में गंगास्वरूप ही थी दोनों में इतना गाढ़ प्रेम था कि एक दिन के लिये भी अलग नहीं रह सकते थे कर्णा कर्णीनया इस बात का राजा को पता लग गया, राजा ने सोचा यह प्रेम तो स्त्री का बनावटी ही दिखता है मगर मंत्री उलू बन गया है। खैर कोई बात नहीं सच्चा प्रेम है या कर्तवी इस की परीक्षा करनी चाहिये ऐसा सोच राजा मंत्री को साथ ले किसी दूर गांव के लिये रवाना हो गया मंत्री का गगा उपर प्रगाढ़ प्रेम था वह रास्ते से ही कोप कोप दो दो कोप से पत्र लिख लिख कर अपने घर कर्मचारी को भेजता रहता। यह भी राजा ने देख सुन लिया राजा ने भी मंत्री की पत्नी को लपसी में लूणवत मिजाक में एक पत्र लिख मारा। कौतुकवश परीक्षा के निमित्त में लिख अपने कर्मचारी को गंगा के घर रवाना किया संसार में झगड़े का मूल ही हंसी है राजा की तो केवल हंसी ही होगी मगर गंगा के प्राण पखेरू उड़ गया तो क्या दशा होगी ? यह कौन सोचता है। कर्मचारी ने गंगा के हाथ में पत्र दिया उसने खोल पढ़ा सिर्फ इतना ही लिखा हुआ था कि मंत्रीश्वर की अचानक आज मृत्यु हो गई है होनहार बलवान हुआ करता है धैर्य धारण करें। यह समाचार पढ़ते ही गंगा जमीन पर मूच्छा खाकर गिर पड़ी उसी समय उसका प्राण पखेरू सदा के लिये उड़ गया। मानो-कि पति की शोध में ही निकल पड़ा हो। इससे अनुमान कीजिये कि पति के साथ कितना प्रगाढ़ स्नेह होगा। जो कि पति के मृत्यु के समाचार मात्र से यह भी मर गई।

सेवक ने आ राजा को कहा महाराज ? गंगा पत्र पढ़ते ही खतम हो गई। यह सुन राजा बड़ा खेदित हुआ और अपने

को धिक्कारने लगा स्त्री हत्या का पाप व्यर्थ का माथे ले लिया। इस तरह सोच कर मंत्री को गंगा का स्वरूप बताया उसके हृदय में इतना आघात लगा मानो कि अचानक वज्र पड़ा हो। उसी समय मरने के लिये तैयार हो गया चित्ता के लिये कर्मचारी को आदेश दे डाला पश्चात्ताप की भट्टी में जलते हुए राजा ने खुब खुब मंत्री को समझा बुझा करके मरने से रोक दिया। मैंने तो कौतुकवश यह काम किया लेकिन आत्मघात के लिये हो गया। सच्चे दिल से पश्चात्ताप किया जाय तो पाप से मानव छुट सकता है मगर होना चाहिये पवित्र आशय से। न कि बनावटी और न लोक दिखाउ। राजा भी पूर्ण हृदय से पश्चात्ताप करने लगा।

राजा के आग्रह पर मंत्री ने मरने का विचार सर्वथा छोड़ दिया किन्तु उदासीन रहता था होते होते बारह वर्ष निकल गये मंत्रीश्वर बारह वर्ष के बाद अपनी पत्नी गंगा की हड्डियां लेकर के गंगा नदी पर पहुँचा! स्नान वगैरह शुद्धि करने के पश्चात् अस्थियों को नदी में छोड़ने के समय बुलंद आवाज से गंगा का नाम उच्चारण करने लगा।

कुदरत की बलिहारी अपूर्व है उसी समय बनारस के राजा की राजकुमारी सखियों के साथ जलक्रीड़ा के लिये वहां आई हुई थी उसने पूर्व भव सम्बन्धी गंगा का नाम सुना और उसे जाति स्मरण ज्ञान पैदा हो गया वह मूर्च्छित अवस्था में जमीन पर गिर पड़ी। यह देख सखियें आकुल व्याकुल हो गई शीतल पवन किया, पाणी छांटा और राजा को बुलाने के लिये गई दासी के द्वारा समाचार पाते ही राजा दौड़ नदी पर आया। बात बात में तो वहां मेला लग गया हजारों नर नारी वहां जमा हो गये राजा ने कहा क्या हुआ क्या हुआ? यही ध्वनी चारों ओर से आने लगी एक दासी ने कहा हजूर? वह कोई विदेशी

स्नान कर रहा है (अंगुली से बताती हुई) उसने न मालूम क्या मंत्र पढ़ा है उसको सुनते ही यह नीचे पड़ गई है और कुछ भी नहीं हुआ है। इतने में शीतल उपचार के द्वारा कन्या को चेतना आ गई और बोली पिताजी ? इस विदेशी पुरुष के लिये आपने बूरा चिन्तवन किया तो मैं गंगाजी में डूब मरूंगी।

यह सुन सब के सब चकित हो गये राजा ने कहा बेटा ? यह बात क्या है। इसका स्पष्ट खुलासा करो कुमारी ने कहा पिताजी ? यह विदेशी राजा का मंत्रीश्वर है और पूर्व भव का मेरा पति है मेरा नाम पहले गंगा था और उसी नाम से उसका ही हाड़ का यहां वह बहा रहा है उसने गंगा का नाम लिया जिससे मुझे जाति स्मरण ज्ञान हो गया अपने पूर्व के भावों को मैंने देख लिया और आप से मेरा यही विनम्र निवेदन है कि इसी मंत्रीश्वर के साथ मेरा विवाह होना चाहिये। वरना मैं इसी समय प्राण त्याग दूंगी।

कुमारी के वचन सुन राजा ने उस मंत्रीश्वर का बड़ा सत्कार किया और उसे राजमहल में ले जा करके बड़े आडम्बर पूर्वक राजकुमारी के साथ लग्न करवा दिया। पूर्व भव की पत्नी को इसी जीवन में पाकर मंत्री भी बड़ा प्रसन्न हुआ। दोनों में पहले जैसा ही प्रेम से व्यवहार चलने लगा।

इसलिये हे कनकावती ! बाईजी ! आप भी मरने का विचार छोड़ो, मरने में सार नहीं है दुःख के मारा मरने से क्या दुःख छुट जायगा ? वहां भी नरक तथा तिर्यंच गति के दुःख भोगना ही पड़ेगा। क्योंकि आत्महत्या करने वाला जीव दुर्गति में जाता है और नरक तिर्यंच गति को ही दुर्गति माना है यहां न तो माता मानी है और न काका काकी जो कि तुम्हारे माथे पर हाथ फेरेगा। नरक में परमाधामियों के द्वारा तीव्र यातनाएं भोगनी

पड़ेगी। इसलिये आत्महत्या का सर्वथा विचार दिमाग में से निकाल दो यही मेरा बार बार निवेदन है।

मालण के वचन सुन कुमारी कहने लगी। हे सखि! प्राणनाथ के विना उत्तम स्त्री का जीवित रहना ठीक नहीं है, पति के विना स्त्री पद पद पर अपमान पाती रहती है। विवाह के काम में अथवा और कोई मंगल कार्य में सधवा स्त्री को ली जाती है। विधवा का केवल तिरस्कार किया जाता है। और मकान में भी न आने दे। इसलिये अब संसार में मेरा रक्षक कौन! जिस करामाती को मैंने पसन्द किया था वह तो संसार से चला गया। जहां मेरा हृदय सम्राट् गया है वहां पर मैं भी जाना चाहती हूँ, यह मेरा पूरा निश्चय है और आज रात को ही जाउंगी।

यदि कुमार की बात नहीं की तो संभव है जरूर मर जायगी। कह देना ही ठीक होगा। ऐसा सोच मालण ने कहा सखि! खेद मत कर! तेरा पतिराज कुशल पूर्वक है यह सुन कुमारी बडी प्रसन्न हुई और बोली, बहन! यदि मेरा नाथ जीन्दा है तो कौन ऐसा मूर्ख है जो मरना चाहें! किन्तु तूं भी गप्प गोला चलाने में बडी चतुर बन गई है वह तो कल शाम को शूली पर चढ गया बताते हैं तो क्या शूली से जीन्दा हो सकता है? केवल मेरे को खुश करने के लिये ही तुम मेरे से मीठी मीठी बातें करती हो।

मालण ने कहा नहीं बाईजी! मैं मीठी २ बातें करूं. इस से मुझे क्या लाभ! आप के समक्ष मैं शपथ पूर्वक कहती हूँ आपका प्रिय रूपसेन कुमार आनन्द में है क्यों यही नाम है? यदि मैं झूठ बोलती होउं तो चारों हत्या का पाप मेरे को लगे बस अब तो विश्वास है! आज शाम को तुम्हारे पास आ

जायगा। हमेशा के समय पर यदि नहीं आवे तो तेरी इच्छा हो वैसा करना। लेकिन तब तक तो मर मत जाना। आज रात को अवश्यमेव आ जायगा मेरी वाणी खाली नहीं जायगी निश्चिंत रहे और अब मुझे जाने दीजिये समय अधिक हो गया है। मेरे प्राणनाथ भी तो चिन्ता करते होगें आज इतना विलंब क्यों ?

शपथ और चार हत्या के पाप की बात मालण ने की जिससे कुमारी को कुछ शान्त्वना मिली और मालण को जाने का आदेश दे दिया। मालण घर चली गई आते ही कुमार को सब बातें यानि अथ इति तक की कह सुनाई और यह भी कहा कि आज शाम का वादा करके आई हूँ इसलिये हमेशा की अपेक्षा आज जल्दी चले जाना, भूल न रहे। वरना वह मर जायगी तो पाप तेरे माथे पर रहेगा चूंकि मैंने तो तुझे साफ कह दिया है।

रूपसेन यह सुन बडा प्रसन्न हुआ एक दिन निकालना भी वर्ष जैसा हो गया येन केन प्रकारेण दिन पूरा किया संध्या के समय ही रूपसेन कुमारी के महल में पहुंच गया रूपसेन को देखते ही बादल को देख मयूर की तरह कुमारी नाचने लग गई और उसका हृदय कमल की भांति प्रफुल्लित हो उठा।

जिस प्रकार चकवी चकवे को पाकर प्रमोदित होती है ठीक वैसे ही रूपसेन को पा कनकावती विभोर हो गई। यह तो स्वाभाविक ही है कि प्रिय वस्तु की प्राप्ति में सब को हर्ष हो ही जाता है। शिशिर ऋतु में अग्नि से आनंद आता है, क्षीर का भोजन सब को प्यारा लगता है, राजा का सन्मान प्रतिष्ठा वर्धक होता है ठीक वैसे ही प्रिय इष्ट मित्र का मिलाप सब को प्यारा लगता ही है।

कुमार ने कहा प्रिये ! अब अपने यहां ठहरना उचित नहीं है चले जाना चाहिये कुमारी भी चलने के लिये तय्यार हो गई रूपसेन मालण के घर से अपना सामान ले आया और बिना मालण को कहे ही कुमारी को हाथ पर बैठा कर रूपसेन आकाश मार्ग से रवाना होकर उसी वृक्ष के नीचे आ विश्राम लेने लगा जिस वृक्ष से योगियों के द्वारा चार वस्तुएं मिली थी। कुमारी तो रात की वजह से रूपसेन के पास सो गई और रूपसेन द्वारपाल की भांति जागरूक बैठ गया। उद्यम करने से दारिद्र दूर भागता है जाप से पाप नाश होता है मौन रहने से झगड़ा कदापि नहीं होता है ठीक वैसे ही जागते रहने पर भय उसके पास नहीं भटकता।

निर्धनी, धनवान, राजा, मंत्री प्रवासी, रोगी, विद्यार्थी, क्रोधी, लम्पटी, और वेश्या इतने लोगों को रात में नींद नहीं आती। भले पड़े पड़े करवटें बदलते रहें मगर नींद तो देश निकाला दे चली जाती है। क्योंकि निर्धनी मानव को धन की चिन्ता में स्वप्न देखना पड़ता है यहां जाउं और वहां जाउं -इस तरह तर्क वितर्क मय रात को व्यतीत करता रहता है। और जिसके दिमाग में विचार वायु बहुत हो उसको कभी भी नींद नहीं आती। धनवान को भय लगा रहता है डाकू पूर्व से आवे या पश्चिम से, रात भर धन के लिये उसे पहेरा देना पड़ता है, जिसके पास ज्यादा धन है वह उतना ही ज्यादा दुःखी है। राजा और मंत्री को राज्य की खटपट में पड़े रहने से नींद नहीं आती है, शत्रुओं को कैसे दबाना, राज्य की कैसे उन्नति करना, और प्रजा का प्रेम कैसे सम्पादन करना इत्यादि मानसिक चिन्ता के कारण नींद छोड़ चली जाती है। प्रवासी यानि रात दिन मुसाफरी करने वाला नींद के लिये सो जाय तो स्टेशन वगैरह भी चूक जाय और इच्छित कार्य की प्राप्ति भी न हो सके।

इसलिये वह भी नींद नहीं ले सकता । रोगी यानि बीमार व्यक्ति कष्ट के मारा नीन्द नहीं ले सकता । विद्यार्थी यानि पढने वाला बालक परीक्षा में फैल हो जाने के भय से रात भर पढता रहता है अतः चिन्ता के निमित्त उसे भी नींद नहीं आती । क्रोधी अर्थात् कषाय की प्रकृति वाला रात दिन यही सोचता रहता है वह मेरा दुष्मन है इसे काटू बाढू और नाश करूं, इस तरह की चिन्ता होने से वह भी नींद नहीं ले सकता । लम्पटी यानि व्यभिचारी व्यक्ति रात भर गलियों में भटकता रहता है और सुवर्ण वाली महिला को ढूंढता रहता है अतः भटकने के हेतु वह भी नींद नहीं ले सकता ! और वेश्या का तो पूछना ही क्या ? रात भर उसके घर तो कामुक लोगों का मेला लग जाता है और वह सब को प्रसन्न करने में लगी रहती है "वेश्या, वकील और वैद्य, ये पैसों के यार" वेश्या का यही उद्देश रहता है कि आगंतुक व्यक्ति के दिल और दिमाग में शान्ति का वातावरण पैदा करना और पैसे बटोरना । इसी कार्य में जुट जाने के कारण वेश्या भी रात भर नीन्द नहीं ले सकती, वह इसी में आनंद मानती है इसी तरह रूपसेन भी पूरा प्रवासी था उसे नीन्द कैसे आवे ? जिसमें भी साथ में स्त्री । उनकी रक्षा करना उनका फर्ज है, और इसी कर्तव्य का पालन करने के लिये रूपसेन जागरुक बैठा है ।

उसी वड़ की शाखा पर एक बाबाजी आये हुए थे रात में बाबाजी जोर जोर से रोने लग गये साथ में बाबाजी की धर्म पत्नी भी थी बाबाजी को रोते देख बाबी ने कहा स्वामिन् ? इस अंधकार मय रात और भयंकर जंगल में क्यों रोते हैं ? यदि आप की आवाज किसी जाते आते चोर ने सुन ली तो अभी अपनी बारह बज जायगी । अतः रोना बन्द करो और यह बताओ की आज रोने की क्यों सूझी ।

बाबाजी ने कहा हे प्रिये इस वड़ को देख मेरे हृदय में अत्यन्त पीड़ा हो रही है हृदय फट रहा है जिससे रोना आ गया एक दिन वह था कि इस वृक्ष पर चार बाबाजी बड़े प्रेम से रहते थे मैं भी सामील था। हम लोगों के ध्यान के प्रभाव से प्रसन्न हो कर के देव ने चार वस्तुए दी। जर्जर कंथा, पवन पावड़ी, जादुई दण्डा और अक्षय पात्र। इन चीजों के बल पर हम मजा कर रहे थे। इतने में अचानक एक धूर्त इस रास्ते से होकर निकल पड़ा। वह हम लोगों को ठग करके चारों ही वस्तु ले गया। धूर्त भी बड़ा उस्ताद निकला कि दिन दहाड़े हमारी आखों में देखते हुए धूल डाल के चला गया। इसलिये हे प्रिये ? इस वड़ को देख वे बातें स्मृतिपंथ में आ जाने से सिवाय रोने के और करभी क्या सकता। जगत में किसी का भी विश्वास नहीं करना चाहिये। भले वे मित्र क्यों न हो। चूंकि संभव है कभी जगड़ा हो जाय तो सारी बातों का भंड़ा फोड़ कर देगा। यह भी सही है कि मित्र से कोई कपट नहीं रखा जाता। इसलिये कभी न कभी वह मित्र भी शत्रु वन बैठेगा। अतः हे भद्रे ? मेरा यहां धन रूप सर्वस्व खो गया जिससे हृदय रोता है।

यह सुन बाबी ने कहा यहां जंगल में रोने से आप की फरियाद कौन सुनेगा ? होनहार होकर ही रहता है। विपत्ति में खेद करने से क्या होगा ? और सम्पति में हर्ष भी नहीं मानना चाहिये कर्म की लीला न्यारी है। उन्हीं के अनुसार मानव को भला बूरा होना ही रहता है। यदि आप की चीजें कोई उठा ले गया तो वह भी उपकार ही करेगा। लक्ष्मी का फल भी तो यही है। वरना नाश तो अवश्यम्भावी है। क्योंकि धन की तीन गति विद्वानों ने बताई है दान भोग और नाश। यदि न तो देता है और न खाता है तो तीसरी गति तो अवश्य होकर ही रहेगी।

धन और निधन को मानव नहीं जान सकता है मगर दोनों जीवन में नियत हो चूका है। दूसरा यह भी देखा जाता है कि दरिद्रों का मनोरथ कदापि पूरा नहीं होता। वन का कुसुम कृपण की लक्ष्मी कूप की छाया और सुरंग की धूली ये किसी के काम में नहीं आती है विनाश के लिये ही इनका जन्म हुआ है। किडीयों द्वारा संचित धान्य, मक्खियों द्वारा संचित मधु और कृपण की लक्ष्मी ये चीजें दूसरों के काम में ही आया करती है इसलिये हे स्वामिन्? आप भी तो पूरे कृपण राज है न देते है और न खाते है आखिरी तीसरे मार्ग से लक्ष्मी गये बिना नहीं रहती है। आप की चीजें गई सो गई अब चिन्ता करना व्यर्थ है और व्यर्थ रोना है। कोई फायदा नहीं है। किन्तु अब यह बताओ कि आपने इतने वर्ष इस झाड़ पर निकाले तो कोई आश्चर्यकारी जड़ी बूटी देखी या नहीं?

योगी ने कहा इस वन में एक ऐसा वृक्ष है जिसको सूंघने मात्र से ही मनुष्य बंदर बन जाता है। इस पर बाबी ने कहा, ऐसी बूटी क्या काम की जो मानव को लंगूर बना दें। तब बाबा ने कहा हे प्रिये! दूसरी एक बूटी ऐसी भी है जो बंदर को मानव बना देती हैं। अर्थात् ये दोनों तरह की बूटियां हैं जो कि बंदर को मानव, और मानव को बंदर बना सकती है।

बाबी ने कहा, ऐसा है तो दोनों बूटी लाकर के मुझे दे दो अपने साथ होगी तो किसी समय काम में आयगी। उसी समय दोनों बूटी बो लाकर बाबा ने बाबी को दे दी और उसी समय आगे जाने के लिये दोनों रवाना हो गये।

बाबा बाबी की सब बातें नीचे बैठा हुआ रूपसेन सुन और देख रहा था उसने भी दोनों जडी बूटी ले ली, और अपनी

जेब में छिपा ली, चार चीजें तो पहले यहीं पर प्राप्त हुई थी और आज जड़ी बूटी प्राप्त होने से रूपसेन अत्यंत प्रसन्न हो गया। कनकावती उठ खड़ी हुई वह पहेरा लगाने लगी। रूपसेन सो गया सोते के साथ निद्रादेवी ने घेर लिया, फिर कनकावती ने सोचा, स्वामी की पोटकी में क्या क्या है? देख तो लेना चाहिये। पोटकी खोली तो योगी के योग्य सामान को देख कर विचार में उतर गई। यह तो कोई महान् धूर्त है। और व्यापारी के वेष में दिन भर सजा करता है। धूर्त लोग वास्तव में ऐसे ही हुआ करते हैं और मैं भोली इनके पंजे में फस गई। मैं तो आडम्बर और रूपवान को देख कर पागल बन गई। पहले पहल आडम्बर देख विश्वास नहीं करना चाहिये। थोड़ा भी पढा हुआ पोपट को देख वेश्या ठगी गई वैसे ही मैं चक्र में आ गई। जैसे कि--

सिन्दूरपुर शहर में मदन नाम का कोई धूर्त ब्राह्मण रहता था उसने एक शुकराज को अपने घर पाला, उसको पढाने के लिये बहुत कुछ महेनत ब्राह्मण ने की लेकिन वह कुछ भी न सीख सका, आखिर परेशान होकर के ब्राह्मण ने उसे इतना पाठ किसी प्रकार पढा ही दिया, "वीसे वीसा"। अब कोई भी आकर के पोपट को पूछे, भाई! तुम कुछ बोलना जानते हो? तब वह वही उत्तर देता है, वीसे वीसा। यह सुन लोग समझ गये कि तोता बडा होशियार है। एक दिन वह ब्राह्मण उस पोपट को ले बाजार में गया। चार रास्ते के बीच उसको वेचने के लिये बैठ गया।

अचानक एक वेश्या की दृष्टि सुन्दर पोपट पर जा पड़ी और वेश्या ने ब्राह्मण को पूछा पण्डितजी? शुक कुछ बोल जानता जानता है? ब्राह्मण ने कहा यह सब कुछ जानता है यदि तुझे विश्वास न हो तो उसे ही पूछ ले। तब वेश्या ने पोपट को ही

पूछ लिया शुकराज ! तू मेरी मा को पढा सकेगा ? उस ने भी कह दिया "वीसे वीसा" । इस पर वेश्या ने प्रसन्न होकर के काफी किम्मत ब्राह्मण को देकर उसे खरीद लिया । घर जाने पर कहा अब तुम मेरी माता को पढाओ, वह तो बार बार वीसे वीसा रटने लगा । लेकिन आगे कुछ भी न बोल सका, यह देख वेश्या पश्चात्ताप करने लगी और तो कर भी क्या सकती थी ! जिस तरह ब्राह्मण ने वेश्या को ठगी वैसे ही मेरे को इसने ठग ली है । मैं तो राजकुमारी हूँ और यह योगी, इनके साथ संयोग हो गया । कर्म की विचित्र घटना है । हा देव ! तुमने बडा अनर्थ कर दिया ! मानव क्या सोचता है और होता है अन्यथा । नीच जातीय पुरुष के संग से तो मरना ही श्रेयष्कर है । चूंकि इनके साथ मन से लग्न कर दिया । दूसरे के साथ तो हरगिज विवाह नहीं करूंगी । इनके साथ रहना भी उचित नहीं है और बिना पति के स्त्री की ससार में इज्जत भी नहीं है । इसलिये सर्व प्रथम तो मुझे यहां से अपनी राजधानी में चले जाना चाहिये फिर मरने का उपाय सोचूंगी । ऐसा मानसिक संकल्प विकल्प के साथ कुमार की सब वस्तुएं लेकर पवन पावडी के द्वारा राजकुमारी आकाश मार्ग से अपने महल में लौट आई । रात की वजह से कुमारी का गमनागमन कोई नहीं जान सका, सारा गांव सोया हुआ था ।

धिक्कार है स्त्री की बुद्धि को कि दृढ स्नेह वाले पति को भी जंगल में भर निद्रा में कंकर की तरह छोड़ कर आ गई । कवि ने ठीक ही कहा है कि झूठ बोलना, साहस करना, माया रखना, मूर्खत्व, अतिलोभ, अपवित्र और निर्दयत्व, ये स्त्री के स्वाभाविक जन्मसिद्ध दोष माने गये हैं । प्रायः कर स्त्री आगे पीछे का विचार नहीं कर कार्य में प्रवृत्त हो जाती है । प्रायः कर

स्त्रियों की बुद्धि पीछे हुआ करती है कहावत है कि "विधवा होने पर अकल आती है"। चाहे कितनी भी पढी लिखी चतुर क्यों न हो, मगर सब शृंगार धारण करने पर भी अपने पैर की एडी ही देखेगी। कुमारी भी महान् साहस के बल पर एकाकी रात में राजमहल में पहुँच कर आनंद से समय पसार करने लगी।

कुमारी के चले जाने पर कुमार निद्रामुक्त होकर चारों ओर देख कर स्त्री को बुलाने लगा मगर न तो उत्तर आता है और न कनकावती देखने में आती है। फिर सोचा शायद अंधेरा ज्यादा होने से उसे नींद आ गई होगी फिर जोर जोर से बोला फिर भी कोई प्रत्युत्तर नहीं। हे देवी! कमल खुलने का समय हो रहा है, सुन्दर वृक्ष पर बैठे हुए कुकड़े बोलने लग गये हैं; लोग न्हाने के लिये नदी पर जा रहे हैं हे सुनयने! रात्री खत्म हो गई है अब तो उठो, फिर भी कोई उत्तर नहीं। तब दूसरी बार कुमार कहने लगा जंगल के हरिण भी घास खाने के लिये झुंड के झुंड अपने स्थान से रवाना हो रहे हैं, पक्षीगण भी दाना पानी के लिये अपने अपने घोसलों को छोड़ कर चारों ओर भाग रहे हैं और मार्ग में पथिक लोगों का आगमन शुरु हो गया है हे सुलोचने! रात पूरी होकर प्रातः काल का समय हो गया है। उठो जल्दी उठो अपने को आगे चलना है विलंब हो जायगा। इस तरह बार बार बुलाने पर भी कोई उत्तर नहीं मिलने से रूपसेन को शंका पड़ गई। एक दम उठा और चारों और देखने लगा खूब खूब तलाश की, मगर न तो प्राणेश्वरी कनकावती है और न उसकी प्यारी चार वस्तुएं। दोनों का अभाव देख कुमार के हृदय में बडी चोट लगी। अहो! इस नीद्रा के बीच यह क्या हो गया। नीद्रा अनर्थ का मूल है। निद्रा श्रेयः का नाश करने वाली है, प्रमाद को बढाने वाली, संसार में चक्र लगाने वाली,

और विपत्ति को देने वाली भी यही निद्रा है। निश्चय करके निद्राधीन मनुष्यों को हानि उठानी पड़ती है क्योंकि आजीवन पर्यन्त समुपार्जन धन यदि व्यापारी इसके चक्र में पड़ जाय तो चोर लोग हरण कर चले जाय। इसलिये निद्रा सर्वथा त्याज्य है।

इस तरह रूपसेन खूब सोच कर वड के ऊपर तथा आस पास चारों ओर खूब दूर दूर तक देखने लगा। किन्तु वह न मिली सो न मिली। तब यह मन से निर्णय किया कि माता पिता से मिलने के लिये पुनः अपने गांव चली गई दीखती है। किन्तु वह चली गई उसकी चिन्ता नहीं, मगर मेरे हाथ पांव को तोड़ गई। यानि मेरी प्राणतुल्य चीजें उठा गई-यही हृदय में अपार वेदना है। खेर। कोई बात नहीं। चिन्ता करने से क्या? उद्यम करने से पुनः प्राप्त हो जायगी। रात मिट कर दिन होता है और दिन मिटता है तब पुनः रात का अन्धकार छा जाता है, यह घटमाल निरन्तर चलती ही रहती है। उन्नति और अवनति का चक्र भी निरंतर घूमा करता है ठीक वैसे ही शोक और हर्ष मानव के जीवन में सदा साथ ही रहता है व्यर्थ का संताप करने से क्या? मालुम होता है कि मालण की भांति यह भी मुझे धूर्त समझ कर भाग गई है। मूर्खपने से आदमी ऐसा ही करता है। विचारी इनका क्या दोष! मैंने पहले ही वस्तुओं का चमत्कार उसे बता दिया होता तो यह नौबत ही न आती। इसमें इतना ज्ञान होता तो ऐसा करे भी क्यों? मूर्ख और मुर्दे में कोई अन्तर नहीं रहता है। कुछ तो मेरा दोष है और कुछ उनका भी है। मुझे भर निद्रा में छोड़ भाग गई। मैं तो उसके वचन पर विश्वास रख निद्राधीन बन गया। स्त्रियों के वचन पर जो विश्वास करते हैं वास्तव में वो मूर्ख प्राणी है। क्योंकि कवि ने ठीक ही बताया है कि नारी, नरेन्द्र, नीच, नागिनी, योगी, शस्त्र धारी और नखवाली

जाति का सर्वथा विश्वास मत करो, इतने प्रकार के प्राणी बड़े धोखेबाज़ हुआ करते हैं। स्त्री एक आंख से पुरुष को हसाती है और एक आंख से रुला देती है और स्वयं भी हसती और रोती है। मन से चिन्तवन किसी और पुरुष का करती है और प्रसन्न फिर तीसरे से ही रहती है। इनकी माया को कोई पार न पा सका और न पा सकेगा। स्त्री को अवला कह कर पुकारा है मगर वह अवला नहीं बल्कि सबला है। इसके इसारे पर मानवी नाचने लग जाता है। "आंखे नहीं दोय तीर है, अभ्रु नहीं शमशीर है, स्त्री की आंख में ऐसा कामण भरा है कि मानव को आकर्षित कर लेती है। इस तरह कुमार सोच कर कुनकपुर के प्रति रवाना हो गया !

चलते हुए विचार किया यदि इसी तरह चलता रहा तो थक जाउंगा और वहां पहुँच भी नहीं सकूंगा। इनसे तो बहत्तर यही है कि वंदर बन कर कूदते हुए जल्दी चला जाउं। उसी जड़ी बूटी से रूपसेन स्वयं बन्दर बन गया कुदका मारता हुआ बन्दर रूप रूपसेन थोड़े ही दिनों में कनकपुर शहर के उसी मालण के बगीचे में सहज रूप पुनः धारण कर चंपा के नीचे जा सो गया। रास्ते की थकावट से सोते ही निद्राधीन बन गया।

उसी बगीचे की वही मालण पुष्पों को लेने वहां आई, रूपसेन को जगाया, और मालण ने पूछा भाई ! इतने दिन तुं कहां गया था ? मैं तो रात दिन तेरी चिन्ता कर रही हूँ, मेरे को पूछे बिना ही कहां चला गया था ? अथवा किसी से मिलने गया था ? क्या बात है। सब सत्य बातें कह सुनाना। झूठ मत बोलना।

रूपसेन ने कहा बहन ! मैं कभी झूठ नहीं बोलता हूँ।

इतने दिन तेरे घर पर रहा मगर कभी झूठ बोला? मैं सही बात बताता हूँ। मैं उसी रात में कनकावती को लेकर भाग गया था मगर वह मुझे रात के समय जंगल में छोड़ कर वापस आ गई। इत्यादि सारी कथनी कह सुनाई।

आश्चर्य मालण ने कहा भाई! उसको तो मैं राजमहल में ही देखती हूँ और हमेशा हार ले करके मैं उनके पास जाया करती हूँ मगर उसने इस विषय में कभी चर्चा तक नहीं की।

बहन! मैं सत्य कहता हूँ। तेरे कहने के अनुसार मैं उसी रात में उसको ले चला था किन्तु एक बड़ के नीचे रात में विश्राम लिया वह सोती तब मैं बैठा और मैं सोया तब वह बैठी और मेरा सब सामान लेकर भाग आई। इसलिये मेरे साथ उसने विश्वासघात किया है अतः मेरी यह इच्छा है कि एक बार उसे धोके का फल बताउं। रूपसेन कह कर रुक गया।

यह सुन मालण ने कहा भाई? अबला के ऊपर क्रोध करना अच्छा नहीं। कीडि के ऊपर पांच शेरी डालने से क्या दशा होती है? वही दशा उनकी हो जायगी। वह विचारी भोली है, उनके अपराध को क्षमा कर देना चाहिये।

तब कुमार ने कहा बहन? येन केन प्रकारेण एक बार उसके महल में जाने की मेरी तीव्र इच्छा है।

मालण ने कहा भाई? सात सौ पहरेदार बैठे हैं, ख्याल है? पहले तो तू पवन पावड़ी द्वारा आकाश मार्ग से चला जाता था मगर अब वहां तू नहीं जा सकता; क्योंकि तेरी शक्ति रूप वस्तुएं उनके पास है। अतः जाने का विचार तो छोड़ दो। लेकिन यदि पत्र भेजना हो तो लिख दो, मैं पहुँचा दूंगी।

कुमार ने कहा बहन ? पत्र से काम नहीं चलता। वहां तो मेरे जाने से ही काम होगा। और जाने के लिये मेरे पास बहुत कलाएं है। और बुद्धि है। यदि एक कहना तूं मेरा माने तो मैं तुझे उपाय बताउं। परन्तु यह किसी को कहना नहीं चाहिये। गुप्त ही गुप्त, यानि तेरे मेरे सिवाय कोई भी जान न सकें। किन्तु मुझे स्त्रियों का विश्वास नहीं है। चूंकि उसके हृदय में गंभीरता बहुत कम है। बिना पाल पानी नहीं रह सकता, चालणी में भी पानी नहीं रहता ठीक वैसे ही नारी के पेट में भी बात नहीं टिकती. थोड़ी देर रखने की कोशिश की जाय तो उनका पेट ढोल की तरह फूलने लग जाय। इसलिये बहन ! बारंबार तुझे कहना पड़ता है कि तूं किसी को मत कहना।

यह सुन मालण ने कहा, भाई ? बार बार कहने से क्या फायदा है ! पांचों अंगूलियां सरीखी नहीं हुआ करती है वैसे ही सब स्त्रियें समान नहीं होती है। तूं निशंक होकर के तेरे दिल की बात कर दे। तेरे कहने के अनुसार मैं सब कुच्छ काम करूंगी।

कुमार बोला, बहन ? येन केन प्रकारेण मैं वंदर बन जाउं तूं बंदर रुप मेरे को लेकर के राजमहल में कुमारी के पास जाना, यदि वह क्रीडा के लिये बंदर की मांगणी करे तब सहसा मत दे देना बहुत कुछ आग्रह करने पर मूल्य लेकर के उसे दे देना। जिस से तुझे पैसे का लाभ हो जायगा और मेरा स्वार्थ मैं पूरा कर लूंगा ! वहां पहुँच जाने के बाद तो मैं सब कुच्छ कर लूंगा।

कुमार के वचन सुन मालण तो दंग रह गई। इसमें कित नी कला है। इन से तो सदा डरते रहना चाहिये, वरना क्रोध

में श्रागया तो मुझे अथवा मेरे स्वामी को बंदरी बन्दर न बना डाले ! इसका क्या भरोसा। यह तो पूरा खटपटिया है। ऐसा सोच मालण ने कहा भाई ? तेरा आदेश प्रमाण है और जैसा भी तुम ने कहा है वैसा ही करुंगी।

कुमार तो उसी समय जडी बूटी के प्रयोग से बन्दर बन गया। मालण ने उसके गले में सुन्दर पीतल की झंझीर यानि सांकल डाल दी, गले में छम छम बोलने वाली घूघरियां बांदली। हाथ पग तथा शरीर सब सुन्दर सजा दिया। और बंदर की सांकल हाथ में पकड़ मालण पुष्पों का हार ले राजकुमारी के महल में सानन्द पहुँच गई। उसको किसी प्रकार का रोक टोक न था। और वह हमेशां की भांति आज भी कुमारी के पास आ गई। प्रणाम किया और कुमारी को हार भेट कर. सामने खड़ी रह गई।

लष्ट पुष्ट शरीर एवं श्रृंगार से सुसज्जित बंदर को देख राजकुमारी ने मालण को कहा, सखि ? आज इस को कहां से पकड लाई ? देखने में अच्छा लगता है। तुमको बंदर का शोख कब से लगा है ? खैर। मेरी यह प्रार्थना है यह मुझे दे दे जिस से मेरे दिन शान्ति से निकलेगा। दिन भर इन के साथ आनन्द की बातें करती रहूँगी। यह सुन मालण ने कहा, स्वामिनी ? यह क्या, सारा घर ही तुम्हारा है, मैं भी आपकी हूँ। मगर एक निवेदन है कि इस बंदर को मैं नहीं दे सकूंगी, क्योंकि मेरे स्वामी का यह है। और वे दिन भर इस को बाग की रक्षा के लिये द्वार पर बैठाते हैं। अतः यह मैं कैसे दे सकूं ? मेरे घर वाले सब मेरे पर खफा हो जायेगें।

यह सुन कुमारी ने अत्यंत आग्रह पूर्वक कहा सखि ? तेरे

घर वाले कोई नाराज नहीं हो सकेगें। क्योंकि मैं तुझे इसके वदले में थोडी सोना मोर देती हूँ, जिससे तेरा भी काम होगा और मेरा भी समय इससे ठीक निकलेगा। ऐसा कह कुमारी ने पांच पचीस मोरे मालण के हाथ में दे डाली, मालण तो यही चाहती थी उसी समय बंदर की झंझीर कुमारी के हाथ में सहर्ष पकडा कर प्रसन्नता पूर्वक मालण अपने घर चली गई।

तत्पश्चात् राजकुमारी ने दिन भर बंदर के साथ खेल कूद किया, साथ खाया पीया और वह भी कुमारी के सामने सुन्दर नाच कूद करने लगा। खुब विनोद पूर्वक दिन निकल गया। सूरज अपने स्थान की तरफ चल धरा, दास दासिये भी अपने २ स्थान की तरफ लौट गई निशा का अंधकार चारों ओर फैलने लगा, सब लोग सोने की तैयारी में लग गये। राजकुमारी भी अपने सुन्दर आभूषणों को उतार एवं कपड़े परिवर्तन कर पलंग पर जा सोने की तैयारी करने लगी। बंदर को नीचे शय्या बीछा कर उपर लेटा दिया। दूर नहीं। दोनों निकट ही सो रहे है। मगर एक पल्यंग पर और एक जमीन पर। कुमारी को क्या पता कि मेरे स्वामी ही बंदर बन कर मेरे पास आये है? यदि ऐसा जानती तो इस तरह शय्या की रचना भी न होने पाती। कुमारी सो गई।

बंदर रूप रूपसेन कुमार दूसरी जडी बूटी से सहज रूप धारण कर कुमारी के समीप आस्ते से पलंग पर सो गया। अचानक कुमारी जाग गई देखती है तो बंदर के स्थान पर रूपसेन क्या यह इन्द्रजाल है। या मैं स्वप्न देखती हूँ। यह क्या हो गया। बंदर के रूप में मेरे स्वामी पधारे। यह स्वप्न नहीं, प्रत्यक्ष सत्य देख रही हूँ। लज्जा के मारा एक दम पलंग से नीचे उतर कर कपडे को ठीक करने लग गई, देव की भांति आये हुए अपने

पतिदेव के चरणों में गिर पडी, और हाथ जोड कहने लगी। स्वामिन् ? मेरा अपराध क्षमा करो। हे प्राणनाथ ? आप ही मेरी गति, आप ही मेरा जीवन आप ही मेरे रक्षक और सर्वस्व हो। अज्ञान के वश में होकर के मैंने आपको सताया, और महान् संकट में डाला. आप उन सब को भूल जाईये आयंदा ऐसा घृणा जनक कार्य कदापि नहीं करूंगी लेकिन यह अपराध तो क्षमा कर दीजिये।

यह सुन कुमार ने कहा हे प्रिये ? ज्यादा कहने से क्या! कृत्रिम स्नेह ज्यादा नहीं टीक सकता। सच्चा स्नेह रंग कुछ और ही हुआ करता है क्योंकि एक जगह कविने बताया है कि अपार सागर का भी पार मानव महेनत करने पर पा सकता है। किन्तु स्त्री के चरित्र का ब्रह्मा भी पार नहीं पा सकता। स्त्री का स्वभाव ही बड़ा विचित्र है। कुमित्र में विश्वास कहां ? कुराज्य में निवृत्ति कहां ? कुदेश में जीना कहां ? और कुभार्या से सुख कहां ? मैं तुझे ऐसी नहीं जानता था। जिस समय अपने दीपक की साक्षी में प्रेमलग्न किया था। उस समय का तुम्हारा प्रेम और आज का प्रेम ? कितना अंतर है ? जरा स्वयं सोच ले, मेरे कहने से क्या। तेरी आत्मा को ही पूछले। जवाब मिल जायगा।

कुमार के वचन पर कुमारी के रोम रोम में पसीना टपकने लगा, लज्जा के मारी मर रही थी। फिर भी हिम्मत पूर्वक विनम्र वाणी से कहने लगी। स्वामिन् ? मैं जरुर अपराधिनी हूँ आप दंड देने योग्य है। मगर आप जैसे उत्तम एवं उदार दिल पुरुषों का कर्त्तव्य है कि उसे माफी दे दें, मैं शपथ पूर्वक कहती हूँ कि आयंदा गलती नहीं करूंगी। मैंने आप को संताप दिया वास्तव में मैं अग्नि के समान हूँ आप चंदन के समान शीतल बन करके मेरी गल्ती रुप आग को शान्त करें। चूंकि पर हित

के काम में लगे हुए पुरुष विपत्ति काल में भी विकृति को धारण नहीं करते है चंदन को काटने पर भी चंदन कुल्हाडी को सुगंधी देता है मगर उन का बूरा चिन्तवन नहीं करता है। स्वामिन् ? आप चंदन है, मैं कुल्हाडी हूँ फिर भी आप के चरणों में पड वार वार क्षमायाचना करती हूँ यह गुन्हा साफ करो और भविष्य में ऐसा कदापि नहीं करूंगी। इस तरह कुमारी के दीन वचनों को सुन कुमार कहने लगा।

हे प्रिये ! इस विषय में तेरा कोई दोष नहीं है, यह तो प्राचीन के पाप कर्म उदय में आये है जिससे ऐसा बन रहा है। चूंकि सूर्य पूर्व दिशा को छोड पश्चिम दिशा में कदाचित् उदय हो जाय कमल समुद्र को छोड पत्थर पर पैदा हो जाय। उष्ण आग कदाचित् शीतल बन जाय और शीतल जल कदाचित् उष्ण बन जाय मगर भाविनी जो कर्म रेखा है वह कदापि चलाय मान नहीं होती। जो भी ललाट पट में लिखा है उसको कोई मिटा नहीं सकता, आखिर होकर ही रहेगा। इसलिये हे प्यारी ? यह तो मेरे कर्म का चक्र था वह मैंने भोग लिया। अब तुझे एक वात कहना है कि यदि तूं मेरी आज्ञा मानने के लिये सदा तैयार है तो ले इस औषधि को सूंघने से अपना प्रेम चिरस्थायी बन जायगा। कभी बीच में संकट रुप दिवाल खडी न होगी। ऐसा कह कर रूपसेन ने औषधि के निमित में वन की जडी बूटी उसे सूंघा दी वह विचारी आखिर भोली थी रूपसेन के वचन पर श्रद्धा होने से सूंघते ही वंदरी वन गई।

रूपसेन उस भोली राजकुमारी रुप वंदरी को सांकल से पलंक के पाये के वांद कर चारों वस्तुओं को लेकर के रातोरात पवन पावडी से मालण के घर पहुंच गया ! दूसरे दिन उषा के समय रूपसेन मालण के घर से भी अपना सामान ले जंगल

में चला गया! अब किसी भी प्रकार से राजा अपने को बुलावें वैसा प्रयत्न करना चाहिये। इसके लिये योगी का वेष ही सब से उत्तम है बहुमूल्य आभूषणों को उतार कर योगी का वेष पहन लिया। सारे शरीर को राख में रंग दिया। बिल्कुल अवधूत वेष को धारण कर मार्ग के बीच एक झाड़ के नीचे धुनी लगा कर बैठ गया!

कभी भुमि शय्या, और कभी सुन्दर पलंक पर पथारी, कभी शाकाहारी और कभी बढिया भात का भोजन, कभी कंथाधारी और कभी दिव्य अलंकार धारी, मनस्वी आदमी कार्य की इच्छा से सुख दुःख को नहीं गिनते है और समय पर जैसा तैसा में भी सतोष मान लेते है और अनेक रूप भी मौके पर धारण कर लेते हैं। इसी तरह रूपसेन भी पूरा मनस्वी पुरुष था। इसने भी अपने कार्य को सफल बनाने के लिये योगी का वेष पसंद किया! लम्बी २ जटा बनाई। इधर उधर दंड कमंडल रख दिया जर्जर कंथा, पवन पावड़ी वगैरेह सब चारों ओर रख दिया बीच में धूनी लगा दी। और रास्ते में आते जाते लोगों को प्रभावना के लिये सोना मोर एक एक सब को देने लगा, गांजा भांग चिलम चडस वगैरेह का साधन रख दिया जो भी इच्छा हो पीयो और माल पाणी चाओ और मजा करो! इस तरह के व्यवहार से आकर्षित जनता दिन दूनी और रात चौगुनी बढने लगी, रूपसेन रूप बाबाजी के पास मेला मंडने लग गया बाबाजी के दर्शन और द्रव्य के लिये सेंकड़ों नर नारी जमा होने लगे।

उधर राजकुमारी के महल में उषा के समय दासियें पहुँची देखते ही भयभ्रान्त हो गई चूंकि कनकावती के स्थान पर सुन्दर बन्दरी बन्धी हुई देखी, धड़ा धड़ दौड़ती हुई दासियें राजा तथा राणी के पास जाकर कहने लगी। महाराज? अनर्थ! महा अनर्थ!

राजकुमारी नहीं है उनके स्थान पर एक बन्दरी बैठी है यह सुनते ही सब के सब आश्चर्य में पड़ गये।

राजा राणी मंत्री वगैरेह सब कुमारी के महल में दौड़ आये, पुत्री रूप बन्दरी को देख सब खेदित हो गये। क्या मेरी पुत्री के कोई दृष्टि दोष हो गया! क्या डाकिनी शाकिनी का कोई छल प्रपंच हुआ? क्या किसी ने शराप दिया! क्या किसी दुष्ट ने मंत्र की शक्ति से बन्दरी बनाई। अथवा किसी वैरी रूप देव ने बन्दरी बना कर संकट में डाली है क्या? इस तरह राजा सोचने लगा।

उसके बाद राजा ने क्रमशः एक एक करके सब दासियों से पूछा आखिर सब का एक ही उत्तर मिला कि इस विषय में हम कुछ नहीं जानते है। शाम को सोये वहां तक तो यह राजकुमारी पूर्ण स्वस्थ थी। फिर भी राजा ने पूछा खुब पूछा और यह भी कहा तुम कुछ भी नहीं जानती हो, मगर यह तो कहो कि कल यहां कोई आया था?

इस पर एक दासी ने निवेदन किया हजूर! मालण कल आई थी वह तो हमेशां फुलहार लेकर के आया करती है किन्तु कल वह एक सुन्दर बन्दर लेकर के आई थी, इन के अतिरिक्त हम कुछ भी नहीं जानते है और यह भी हम लोग खात्री पूर्वक कहते है कि सोये वहां तक कुमारी तन्दुरुस्त थी, उन की आज्ञा से ही हम लोग सोने गये थे। और प्रातः काल यहां आने पर देखा तो यह दशा मालूम हुई। अब जो भी आज्ञा हो फरमाईये!

यह सुन राजा के दिल में अपार वेदना हुई चिन्ता पूर्वक राजा राजसभा में लौट गया और बुद्धिसागर मंत्री को कुमारी की कथनी कह सुनाई। और यह भी कह दिया कि कल मालण

बन्दर लेकर के आई इससे यह भी साबीत होता है कि मालण ने कुछ पडयंत्र बनाया हो। इसलिये मालण को पहले पूछ लेना चाहिये और उनके बाद आगे कदम बढ़ाना चाहिये। जिससे इसका परिणाम ठीक आजाय।

मंत्री ने उसी समय मालण को बुलाने के लिये अपने निजी कर्मचारी को भेज दिया वह मालण के घर जाकर के बोला चलो, जल्दी चलो, राजाजी बुला रहे हैं विलम्ब न करो सब प्रतीक्षा में बैठे हैं जल्दी चलो।

राजा का आदेश सुन मालण के तो छके छुट गये वह तो जानती ही थी कि आज वह जरूर तूफान करेगा और आपत्ति मेरे पर आयगी इससे मालण के लिये धरती घूमने लग गई किन्तु स्त्रियों में धूर्त्त ही मालण हुआ करती है उनकी बुद्धि को कौन पहुंच सकता है। यद्यपि हृदय में राजभय था फिर भी हृदय को वज्र जैसा कठोर बना कर मालण राजसभा में पहुँच गई। मगर राजा के सामने नीडर खड़े रहना तो बच्चों का खेल नहीं है। मालण भी थर थर धूजने लगी मानो कि शीत ज्वर चढ़ गया हो। मरने का भय सब को लगता ही है। कहा है कि चलने के समान कोई कष्ट नहीं दारिद्र के समान कोई अपमान नहीं भूख के समान कोई वेदना नहीं और मरने के समान कोई भय नहीं है। मालण के दिल में भी पूरा भय था राजा ने मुझे क्यों बुलाई क्या कहेंगे? इस तरह चिन्ता पूर्वक मालण चूप चाप खड़ी खड़ी राजा के सामने देख रही थी।

इतने में क्रोध से लालबूंद नेत्र वाले, थर थर होंठ काम्पते हुए राजा ने कहा अरे दुष्ट मालिनी? नगर में इस तरह के कूड़ कपट कितना किया? दूसरों की बात छोड़ जाने दे किन्तु मेरे ही घर में इस प्रकार की कूट रचना!

भयभीत हुई मालण बोली महाराज ? आप मर्म वाक्य में क्या फरमा रहे हैं मुझे कुच्छ भी खबर नहीं है।

पुनः राजा ने कहा रे दुष्टे ? तुमने कल राजकुमारी को बन्दर दिया था इसके लिये इतनी दासियें साक्षी हैं। और कहती है कि मैं कुच्छ भी नहीं जानती। इतना सरासर झूठ और वह भी मेरे सामने ही !

मालण ने कहा हजूर ? मैंने जबरदस्ती बन्दर कुमारी को नहीं दिया था किन्तु उसके अत्यन्त आग्रह पर मैंने दिया था। और उस बन्दर के लिये हमारे स्वामी ने भी मुझे बहुत उपालम्भ दिया क्योंकि वह बन्दर मेरे बगीचे का रक्षक था। किसी भी अनजान पुरुष को बाग में नहीं आने देता था इतना चतुर वह था एक बार मेरे बगीचे में बहुत योगी लोग आये थे बहुत दिन वहां ठहरे थे और उनके साथ एक बन्दर का झून्ड था योगी लोग तो चले गये चाहे तो वे एक बन्दर को छोड़ गये अथवा वे भूल गये यह तो मैं नहीं बता सकती किन्तु वह बन्दर बगीचे में था मेरे स्वामी ने उसे पकड़ लिया, रात दिन मेरे घर तथा बगीचे में वह मस्त रहता था, कल अचानक मैं साथ ले आई बन्दर बड़ा मनोहर था और राजकुमारी ने आग्रह वश मांग लिया जिससे मुझे प्रेम के नाते देना पड़ा। मैं कुमारी को सोंप मेरे घर चली गई उनके बाद क्या हुआ ? इसमें न तो मैं कुच्छ जानती हूँ और न मेरा इसमें कोई दोष है।

पुनः राजा बोल उठा दुष्टे ? मेरी पुत्री बन्दर की मांगणी क्यों करें। निश्चय पूर्वक तू झूठ बोलती है पापिष्ठे ? उपर से मीठी मीठी बातें करती है और हृदय में हलाहल विष भरा दीख रहा है तेरे को तो चौर दण्ड ही मिलना चाहिये, चौर दण्ड यानि शूली।

राजा का वचन सुन मालण सोचने लगी आज मेरे पर देव रूष्ट हो गया है। बिना कुछ बिगाड़े ही मेरे पर झूठा आरोप आगया। और उसमें भी प्राण मुक्त का कठोर दण्ड। सोचते सोचते मालण के शरीर में पसीना छुट गया। सारा शरीर ही काम्पने लग गया, मालण तरसती आंखों से राजसभा को चारों ओर देखने लगी। जिससे सभ्य वर्ग को यह पता लग जाय कि मालण प्राणों की भीख प्रजा से मांग रही है। कौन ऐसा दयालु है जो कि मुझे छोड़ा कर आजीवन कृतार्थ करें।

इतने में मंत्री उठ राजा से निवेदन करने लगा हजूर यह कौनसा न्याय है? अपराध कोई करे और दण्ड दूसरे को? व्यर्थ का पाप माथे पर क्यों लेते है। याद है पहले भी सर्व जीवों की रक्षा करने में समर्थ विदेशी कुमार को मारने का पाप माथे आपने लिया है। और अब स्त्री हत्या का पाप लेना चाहते है। बिना विचार पूर्वक कार्य करने के सिवाय पश्चात्ताप के कुच्छ नहीं मिलता। अतः आगे पीछे का सोच कर काम करिये जिससे फायदा होगा। वरना व्यर्थ कलंक तो अवश्य आ जायगा।

मंत्री की समयोचित सलाह से राजा का दिमाग एक दम ठंडा पड़ गया। और राजा ने मंत्री को कहा वास्तव में तुम्हारा कहना यथार्थ है। किन्तु जब तक राजकुमारी स्वस्थ न हो तब तक मुझे चैन नहीं। इसलिये उनके लिये कुच्छ उपाय सोचना चाहिये ताकि मेरी आत्मा को शान्ति मिले।

मंत्री ने पुनः कहा महाराज? मालण ने सत्य बात कह सुनाई है इसका कोई दोष नहीं है। क्योंकि बन्दर मालण जरुर लाई मगर बन्दर योगी का था इसमें योगी की कोई करामत है। चूंकि योगी लोग ऐसे ही षड़यंत्र बनाकर दुनियां को ठगते रहते

है। योगी लोग बड़े धूर्त होते है। मंत्र तंत्र और जंत्र के नाम पर दुनियां को लूटते फिरते है। और अधश्रद्धावाले भोले लोग इन की माया जाल में फस जाते है। जल्दी विश्वास कर बैठते है। मगर ये लोग मिथ्यावादी है इतना ही नहीं अपितु दारु मांस भक्षी भी है। ऐसे लोगों के कभी पाले नहीं पड़ना चाहिये। मेरी तो आप से विनम्र अपील है कि अपने देश में जितने भी योगी महात्मा हो उनको राजधानी में बुलाया जाय उसमें कोई न कोई कलावान अथवा जड़ी बूटी वाला निकल जायगा तांकि राजकुमारी को अच्छी बना देगा यही मेरी सलाह है। अब जो भी इच्छा हो वह आज्ञा फरमावें।

मंत्री की राह पर राजा बड़ा प्रभावित हुआ उसी समय मंत्री को राजा ने आदेश दे दिया, बिल्कुल ठीक है जल्दी सब को बुलाया जाय।

तथास्तु कह कर मंत्री अपने घर चला गया, अच्छे अच्छे कर्मचारियों को चारों दिशाओं में योगिराजों को निमंत्रण के लिये मंत्री ने रवाना कर दिये। वे भी आज्ञा पालने के लिये रवाना हो गये।

बड़े बड़े योगीराज अपने अपने अखाड़े जमाकर बैठ थे वहां वे कर्मचारी भी समय पर पहुँच गये। प्रणाम कर राजा का निमंत्रण कह सुनाया। बाबाजी ने कहा तुम्हारे राजा का हम लोगों ने कुच्छ भी नहीं बिगाड़ा है और न राजा के भंडार का माल हम लोग खाते है हम लोग स्वतंत्र है भीक्षावृत्ति से हमारा जीवन निर्वाह होता है। और हम लोग किसी की परवाह नहीं करते है। जाओ तुम्हारे राजा को कह देना हम लोग नहीं आना चाहते है।

इस पर कर्मचारियों ने बावाजी को लालच बताना शुरु किया आप लोग महान कलावान है इस की खबर राजा को मिली है इसलिये राजधानी में आप का बड़ा आदर होगा सुन्दर स्वागत राजा करेगा और बढ़िया में बढ़िया भेट आपके सामने धरने का प्रबन्ध राजा ने किया है। आपके स्वागत का बड़ा विशाल अयोजन किया गया है। और आप को वापस बड़े सत्कार के साथ रवाना करेंगे ग्रतः कृपया जरुर पधारे और राजा को दर्शन दें। इस तरह कर्मचारी के प्रलोभन पूर्वक वचनों को सुन बावाजी विचार सागर में गोते खाने लग गये। इसी लोभ ने ही सारे संसार को उथल पुथल कर रखा है सब लोग द्रव्य के वश हो जाय बावाजी भी इसके चक्र में आगये। कर्मचारी की वाक् चातुरी पर बावाजी प्रसन्न हो गये और उसी समय दण्ड कमण्डल लेकर के राजधानी में जाने के लिये कर्मचारी के साथ ही रवाना हो गये।

राजा ने बावाजी के लिये पहले से ही एक विशाल बाड़े का प्रबन्ध कर रखा था जैसा कि गोशाला हो। सब के सब बावाजी को पोपट पिंजरे की तरह बाड़े में बन्द करना शुरु किया। इसी तरह दूसरी तीसरी और चौथी दिशा में जाने वाले कर्मचारी भी इसी प्रकार समझा-बुझा करके सब बाबाजी को ले आये। किन्तु एक योगी न आया सो न आया। सब बाबाजी से एक मकान भर गया परस्पर गोष्ठी करने लगे। राजा ने अपने को क्यों निमंत्रण भेजा है कैसा स्वागत करेगा और क्या भेट पूजा करेगा? इत्यादि सकल्प विकल्प के साथ परस्पर चर्चा करने लगे।

इतने में पुरोहित मंत्री एवं सब कर्मचारी सहित राजा योगिराजों के मकान के द्वार पर पहुँच गया और बोला है

योगिराजों ! आप लोग देश विदेश में सब जगह घूमते रहते है और जंत्र मंत्र वगैरेह सब कला में आप लोग प्रवीण होते हैं इसलिये ऐसा उपाय करो कि मेरी लड़की बन्दरी बनी हुई है वह ठीक हो जाय। फिर आपका शानदार स्वागत किया जायगा।

यह सुन एक बावा ने कहना शुरु किया महाराज ? हम लोग न तो पढ़े लिखे है और न कलावान है केवल भीक्षा के द्वारा जीवन निर्वाह करते हैं। बन्दरी को मिटाने की बात तो बहुत बड़ी है मगर हम लोग बिच्छू के विष को भी उतारना नहीं जानते है। यदि हमारे पास कोई अच्छी कला हो तो क्या आप के सामने प्रकट न करें ? ऐसा मौका फिर कब मिलता है किन्तु हम लोग सही निवेदन करते है कि हमारे पास कोई जंत्र मंत्र आदि चमत्कार नहीं है। गांवों गांव घूम कर पेट भर लेते है।

राजा ने अपने उन कर्मचारियों को पूछा, जो कि बावाजी को लेने गये थे। तुम यह बताओ कि अपने देश के सब बावे आ गये, या कोई रह गया है। प्रत्युत्तर में एक कर्मचारी ने कहा हजूर ! एक योगी नहीं आया है बाकी सब आ गये है। राजा ने पुनः कहा, वह कहां है ! क्या कहता है, और मेरे बुलाने पर भी नहीं आया ?

कर्मचारी ने कहा महाराज ? एक योगी मार्ग के बीच झाड़ के तले बैठा है। कंथा पलोस में पडी है, उसको खंखेरने से पांच सौ सोना मोर देती है। कोई भी प्राणी उस रास्ते से निकलता है तो उस को एक एक मोर इनाम में देता है। बहुत लोग वहां इकट्ठे होकर बावाजी के चारों तरफ बैठे ही रहते है। गांजा भांग चिलम, सब साधन बावाजी के वहां मिल जाता है। इसलिये हजारों लोग बावाजी के पास बैठे रहते है

मानो कि सदा मेला लगता हो ! बाबाजी बड़े विद्वान् और वक्ता हैं। उन सब को परोपकार का उपदेश बाबाजी ऐसा मनोहर देते हैं कि सब के गले बात उतर जाय !

अपने हाथ से दिये हुए दान का फल जरूर मानव को मिलता है। किन्तु पराये हाथ से दिलाने पर उनका फल अपने को मिले या न मिले यह शंकास्पद बात हैं। सबसे उत्तम मार्ग यही कि अपने हाथों से दान देने की आदत्त रखनी चाहिये। चूंकि परोपकार अपने हाथों से ही करना चाहियें। तिर्यंच भी परोपकार समय पर करते रहते हैं।

मृग कस्तूरी देता हैं। हाथी सुन्दर दान्त देता है, पशु चमडी देता है। गाय, भैंस, दुध देती हैं, मोर पीछा देता हैं। कईएक जानवर ऐसे भी है जो अपना नख देता है सींग देता है और ऊन भी देता है। इस तरह पशु जाति की कुछ न कुछ चीज काम में आता रहती है। लेकिन मनुष्य के शरीर सम्बन्धी कोई भी चीज किसी के उपयोग में नहीं आ सकती ! केवल अपने जीवन में परोपकार करता है तो संसार में उसकी सुगंधी रह जाती है और उस सुगंधी का अनुकरण लाखों प्राणी कर सकेगा। यदि परोपकार न किया तो समझ लीजिये कि पशु जाति से भी अपना जीवन बेकार खो दिया ! तिर्यंच से भी मानव गया गूजरा बन गया ! अतः जहां तक बने मानव को परोपकार करते रहना चाहिये। यदि अपने से परोपकार न हो सकें तो कम से कम इतना तो जरूर ध्यान रखें कि हमारे से किसी का बिगाड़ा न हो। होवे तो भला करे, वरना मौन ले बैठ जाय इसी से थोडा बहुत लाभ हो जायगा। इस तरह बाबाजी जनता को उपदेश दे रहे है।

यह सुन राजा का पारा एक सौ पांच डिग्री चढ गया ! क्रोधावेश में आकर राजा ने कहा, मालुम होता है कि वह बड़ा वदमास दीखता है जो कि मेरी आज्ञा भी नहीं मानता है । जाओ उसको पकड़ कर ले आओ । ऐसे योगी किस काम के जो कि मेरे देश में रहने पर भी मेरी आज्ञा न माने !

राजा के वचन सुन मंत्री ने कहा हजूर ! उस विद्या सिद्ध योगी के ऊपर क्रोध करना उचित नहीं है । आसमान के ऊपर कौनसा कोप ! जंगल का राजा सिंह है उनके लिये कोई खराब चिन्तवन करें फिर भी उन पर सिंह क्रोध नहीं करता है । कारण यह है कि वह बराबरी का नहीं है । विवाह अथवा कोप बराबरी के साथ करना चाहिये । आप नगर के महाराज कहलाते है और वह जंगल का योगीराज है अत उन पर रोप न करिये ।

मंत्री की सलाह सुन राजा ने कहा मंत्रीश्वर ! तुम वहां जाकर के तलास करो कि वह योगी कैसा है ! और क्या क्या बातें करता है ? इन की परीक्षा करके वापस जल्दी आजाना ।

राजा के आदेश के अनुसार मंत्री पांच पचीश कर्मचारी को साथ ले बाबाजी के पास गया । बावाजी के पास सैंकडों नर नारी वैठे हुए थे । उन में से किसी ने कहा बाबाजी ! राजा का मंत्रीश्वर आपके दर्शनार्थ पधार रहे है । इतने में तो मंत्री भी नजदीक पहुंच गया । बड़े प्रेम से मंत्रीश्वर ने बावाजी को प्रणाम किया ! बाबाजी ने भी मंत्रीश्वर को खड़े होकर स्वागत किया ! क्योंकि सारी राजधानी का संचालक ही यह मंत्रीश्वर है राज्यधूरा को चलाने वाला ही यह है । राजा तो नाम मात्र का है मगर सारा बोझा तो मंत्रीश्वर के कंधो पर है ऐसा सोच बाबाजी ने मंत्री का बड़ा आदर किया !

यह देख मंत्री ने कहा, बाबाजी आप तो सब के पूज्य हैं आप को खड़े होने की जरूरत नहीं है। आप कृपा करके अपने स्थान पर विराजिये इसी में हमारी शोभा है।

योगी ने कहा, मंत्रीश्वर ! आप भी तो महापुरुष हैं और राज्य के मान्य होने से सत्कार के योग्य हो। नीतिकार ने कहा है कि राजमान्य, धनाढ्य, विद्यावान, तपस्वी, रण में शूर, और दातार इतने गुण वाले छोटे पुरुष को भी बड़ा मानना चाहिये और उनका आदर करना चाहिये इसलिये नीति के अनुसार मैंने तुम्हारा स्वागत किया है।

उनके बाद मंत्री ने निवेदन किया योगीराज ? आपको राजाजी ने बुलाया है। राजा सर्व दर्शनों के लिये आधार भूत माना गया है अतः आप राजमहल में पधार कर कृपया कुछ कला का प्रदर्शन करो। मैं स्वयं आप को लेने के लिये ही आया हूँ अब शीघ्र पधारने का अनुग्रह करें।

यह सुन बाबाजी ने कहा हे मंत्रीश्वर ! हमारे जैसे योगियों को राजा का क्या प्रयोजन है ? क्योंकि हम लोग तो भीक्षा मांग कर जीवन निर्वाह करते हैं, जीर्ण शीर्ण जो भी मिले कपड़ा पहन लेते हैं भूमि पर ही शय्या मान कर पड़े रहते हैं। अतः तुम्हारे राजा का मुझे क्या लेना देना है। और दूसरी बात यह भी है कि राजा तो उसी को कहा जाता है कि न्याय अन्याय को जानता है और उनके परिणाम को सोचता है। प्रजा यदि पाप करती है तो छट्ठा हिस्सा राजा को लगता है और यदि धर्म करती है तो राजा को भी पुण्य उपार्जन होता है। राजा के पांच प्रकार के धर्म रूप यज्ञ बताये हैं उन लक्षणों से रहित राजा की किम्मत नहीं होती है और राज लक्षण जल्दी आ जाय यह कोई सहज

बात नहीं है। और यदि राजा पाप की प्रवृत्ति करें तो मंत्री को छट्ठा हिस्सा लगता है। मंत्री का परम कर्त्तव्य है कि राजा को पाप प्रवृत्ति से बचावे। वरना पाप का भागीदार मंत्री बनता है। शिष्य का पाप गुरु को लगता है, पत्नी का पाप पति को लगता है वैसे ही राजा का पाप मंत्री को लगता है। इसलिये शिक्षक को कुशल बनना चाहिये तूं भी राजा का शिक्षक है, उसको अन्याय मार्ग से हटाना तुम्हारा कर्त्तव्य है

बाबाजी के वचन सुन मंत्री ने पूछा, राजा ने क्या अन्याय किया! इस पर रोगी ने कहा, मंत्रिन्! सावधानी पूर्वक सुनो। अलग अलग देश तथा पृथक् पृथक् गांव अथवा शहर में घूमने वाले, भीक्षा से जीवन निर्वाह करने वाले, किसी की निंदा अथवा बुराई नहीं करने वाले, और आत्मा में रमण करने वाले ऐसे उत्तम योगियों को राजा ने चोर की तरह वाड़े में बंद कर रखा है। क्या यह अन्याय नहीं? ऐसा अन्याय मैं कदापि सहन नहीं कर सकता। मैं अभी तक चुप चाप बैठा हुआ आप लोगों की लीला देख रहा हूँ। जिस दिन हमारा दिल दिमाग बिगड़ जायगा उस दिन आप लोगों की खैरियत नहीं है। अभी तक भाग्य आपका ठीक है। दिमाग मर्यादा बहार चला गया तब मजा नहीं है। यह निश्चय समझ लेना। इसलिये तुम राजा के पास जाकर के पहले उन सब को छोड़ दो जल्दी जाओ, विलम्ब न करो। लो, तुम भी थोड़ी मोरें लेते जाओ। ऐसा कह कर बाबाजी ने एक मूठी भर करके मोरें मंत्री को दे दी और दूसरे को भी एक एक सब को दे दी। और सब को रवाना कर दिया।

योगीराज के वचन पर मंत्री क्षुब्ध हो गया जबाब सवाल करने की हिम्मत न रही उसी समय मंत्री उठ खड़ा हुआ बाबाजी को प्रणाम कर संकल्प विकल्प पूर्वक राजधानी की तरफ रवाना हो

गया। वास्तव में यह योगी कोई बड़ा जबरदस्त आदमी है महान् चमत्कारिक पुरुष है इतनी स्वर्ण मोरें रोज लुटाता है तो कहां से लाता होगा! हां हां याद आ गया। कर्मचारी ने कहा था जर्जर कंथा सब कुछ देती है। बाबाजी ने ठाठ भी तो अच्छा रखा है। लोभानंदी नहीं है उदार प्रकृति के बाबाजी हैं। इसी-लिये तो हजारों मानव इनकी सेवा में बैठे रहते हैं इस तरह मन ही मन विचार करता हुआ मंत्री राजा के पास पहुँच गया और राजा को एकान्त लेजाकर सब कुछ घटना कह सुनाई। और यह भी निवेदन कर दिया कि सर्व प्रथम तो सब योगियों को छोड़ देना चाहिये। वरना अनर्थ होने की संभावना है क्योंकि वह योगी सामान्य नहीं है। विद्वान् दानेश्वरी कलावान और उदार दिल का योगीराज है। इनका अच्छा आदर करना चाहिये अपने देश में ऐसे कलावान योगिराज बसते हैं जिससे अपना ही गौरव है। उनका यही आदेश है कि सबसे प्रथम वाड़े में बंद किये हुए योगियों को छोड़ देना चाहिये।

मंत्री के वचनों पर जल्दी से जल्दी सब योगियों को छोड़ दिये गये। वे लोग भी राजा को सुन्दर आशीर्वाद देकर अपने २ इष्ट स्थान की तरफ चल दिये।

उसके बाद राजा ने दूसरे विश्वासी कर्मचारियों को बाबाजी को बुलाने के लिये जंगल में भेजे। वे भी बाबाजी के पास पहुंच गये ज्यों ही बाबाजी के निकट जाने लगे त्यों ही बाबाजी ने सिंहगर्जना की, ठहरो, आगे न बढो, यदि मेरे समीप आगये तो बाल कर भस्म कर दूंगा, जाओ, वापस लौट जाओ।

बाबाजी के वचन सुनते ही डर के मारे वापस लौटने लगे दूर से खड़े खड़े ही प्रार्थना करने लगे। हे योगिराज! आपको राजाजी बुला रहे हैं। और आपके आदेशानुसार सब बाबाओं

को छोड़ दिये हैं। आप जल्दी राजधानी में पधारो। तब बाबाजी ने कहा राजा के काम होगा तो वह अपने आप वाहन लेकर के आयगा। जिसके गर्ज होगी वह खुद आ जायगा। जाओ तुम चले जाओ वरना राख की ढेरी बना दूंगा।

डरके मारे भाग गये, राजधानी में लौटते ही राजा को सब वृतान्त निवेदन किया सुनते ही आश्चर्य में ही नहीं वल्कि राजा चिन्ता सागर में डूब गया। मंत्री गया कर्मचारी गया फिर भी नहीं आता है। कोई चमत्कारी पुरुष दिखता है। मंत्री को पूछा, अब क्या करना चाहिये। मंत्री ने अनुरोध किया, महाराज! आप पधारो! इसमें हर्ज क्या है। आप नगर के राजा हैं और वह जंगल का राजा है। लेकिन वह विद्या सिद्ध पुरुष है और अपने गर्ज है। गर्ज के मारा गधे को भी बाप बनाना पड़ता है जिसमें वह तो श्रेष्ठ योगिराज है। इसलिये उनके सामने जाने में कोई एतराज नहीं है।

हाथी घोड़ा रथ पैदल सेना तथा साज बाज के साथ राजा सपरिवार बाबाजी को बुलाने के लिये रवाना हो गया। आगे पवनवेग समाचार योगी के कानों तक पहुंच गये कि राजा स्वयं आमंत्रण देने आ रहा है। बाबाजी मारे हर्ष के फूल रहे थे कि अपना पासा सीधा पड़ गया। बाबाजी के समाचार लाने वाले अनेक भक्त थे। इतने में तो राजा बाबाजी के पास पहुँच गया। जिस का मन विना आलम्बन ही स्थिर हो, विना दर्शन ही जिसकी दृष्टि स्थिर हो, और बिना प्रयत्न ही जिसका शरीर काबू में हो वास्तव में वही योगी और गुरु है। वही पूजनीय एवं सेवनीय है। ऐसा कह कर राजा ने बड़े प्रेम से प्रणाम किया। और वहुत बहुत विनय बताया तब योगी ने भी खड़े होकर राजा का स्वागत किया। दोनों परस्पर एक दूसरे का सन्मान करने लगे।

कवि ने ठीक कहा है कि राजा तो केवल अपने देश में ही पूजा जाता है मगर विद्वान् सर्वत्र पूजनीय माना जाता है। हे योगीन्द्र आप तो महान् विद्वान् एवं कलावान है जिस से सब के मान्य हो इस प्रकार राजा के वचन पर योगि ने कहना शुरु किया।

राजन् आप भी तो पांचवें लोकपाल हो। आप सन्मान के योग्य हो क्योंकि नीति में ऐसा भी कहा है कि वयोवृद्ध हो तपोवृद्ध हो और श्रुतवृद्ध हो मगर धनवान के द्वार पर किंकर की भांति खड़ा रहना पड़ता है। हम लोग तो भीखारी है और आप धनवान है हमारे जैसे योगियों को भी आप के द्वार पर याचना करनी पड़ती है। इसलिये मैं आपका पुनः पुनः हार्दिक स्वागत करता हूँ।

इस तरह बहुमान के वचन सुन राजा ने योगिराज को कहा वाहन तैयार है। जल्दी चलना ही ठीक होगा पधारिये रथ में बैठिये फिर धूप ज्यादा चढ जायगी। राजा के अत्यन्त आग्रह पर योगिराज अपनी जर्जर कंथा वगैरह सामान साथ ले रथ में जा बैठा। शानदार ठाठ के साथ राजा के साथ योगी राजमहल में पहुँच गया। राजा ने उसे सुन्दर आसन पर बैठाया प्रणाम कर पुनः राजा ने पूछा। योगिराज! आप के पास आश्चर्य कारी कोई जड़ी बूटी अथवा कोई कला है? योगी ने कहा गुरु की कृपा से मेरे पास सब कुच्छ हैं। यदि आप की इच्छा हो तो मैं आप को आकाश में उड़ा ले जाउं। मेरे पास सब तरह की कला है आप को क्या चाहिये।

यह सुन राजा तो दान्तो तले अंगूली दबाने लग गया। यह तो बड़ा जादूगर दीखता है कम्पाते हुए राजा ने कहा योगिराज! उड़ने की तो कोई आवश्यकता नहीं है। मगर मेरे पर अनुग्रह करो, मेरी पुत्री एक मास से न मालुम क्या हुआ यह बन्दरी बनी

हुई है उसको आप कष्ट से मुक्त करदें यानि उसको पुनः आप ठीक बना दीजिये यही मेरी पुनः पुनः आप से प्रार्थना है।

योगी ने कहा महाराज यदि आप की लड़की ठीक हो जाय तो मेरे को क्या देगें ? राजा ने कहा एक गाँव और पांच सौ सोनामोर आप को इनाम में दी जायगी और आपका मनोहर स्वागत भी किया जायगा।

योगी ने कहा महाराज ? धन और गांव को मुझे क्या करना है ? धन को तो मैं लात मारता हूँ फिर भी मेरे पास दौड़ कर आता है। अभी भी इतना धन मेरे पास है कि आप का सारा राज्य ही खरीद सकता हूँ। यदि आप को विश्वास न हो तो देख लो यह मेरी जर्जर कंथा रोजाना पांच सौ मोर देती है। ऐसा कह कर जर्जर कंथा को हिलाने लगा धड़ा धड़ खननन . खननन... करती हुई मोरे की ढगली हो गई।

यह दृश्य देख राजा तो अवाक् हो गया। अहो ऐसे मंत्र वादी से तो सदा डरते रहना चाहिये। फिर भी राजा साहस करके बोला आप की क्या इच्छा है फरमाईये।

महाराज उसी कन्या के साथ यदि मेरा विवाह करें तो मैं येन केन प्रकारेण ठीक कर दूंगा चाहे जंत्र से मंत्र से अथवा जड़ी बूटी से अवश्य ठीक कर लूंगा इस में शंका न रखे। मगर मेरी शर्त आप को मंजूर है ? योगी ने कहा।

यह सुन राजा तो और विचार में पड़ गया। यह तो व्याघ्रतटी न्याय सामने उपस्थित हो गया। अब कैसे इस संकट को मिटाना एक तरफ व्याघ्र है दूसरी और जल से परिपूर्ण नदी ! एक तरफ बन्दरी रूप कुमारी और दूसरी तरफ योगी के

साथ लग्न। यह कैसे बन सकता है ? एक कष्ट से कन्या को बचाता हूँ तो दूसरा कष्ट मुख फाड़ खड़ा है। यह तो ऐसा मौका मिला है कि एक व्यक्ति को विदेश जाना है और साथ चुगल खोरों का हो गया। अब न मालूम रास्ते में क्या क्या आपत्ति आयगी। एक तरफ तो भोजन ही बिगड़ा हुआ है और ऊपर से माखी पड़ जाय। फिर कैसे भोजन किया जाय ठीक वैसे ही बन्दरी को मिटाता हूँ तो योगी लग्न करना चाहता है। योगी को कैसे देना ? इस प्रकार विचार कर राजा एकान्त मंत्री के साथ सलाह करने गया। सारी स्थिति का दिग्दर्शन मंत्री को करवाया और पूछा बोलो अब क्या करना चाहिये ?

मंत्री ने कहा हजूर ? एक बार उस की बात मान करके कन्या को कष्ट से मुक्त कीजिये। फिर बुद्धि से कोई मार्ग निकाल देगें। बिचारी कन्या बड़ी तकलीफ में है उसे मैं इस हाल में देखता हूँ तो हृदय में कम कमी छुट जाती है इसलिये सर्व प्रथम योगी की बात मान कर कन्या को ठीक करवाईये।

उसके बाद राजा ने योगी को कहा आप की बात हमें मंजूर है ठीक करिये वह कन्या आपको परणा दी जायगी।

इस पर योगी ने कहा बहुत अच्छा, चलिये राजकुमारी का महल बताईये। राजा मंत्री और योगी तीनों कन्या के महल की तरफ रवाना हो गये। रास्ते में योगी ने कहा आप लोग व्यर्थ चलते हैं चलना अच्छा नहीं है क्योंकि मैं मंत्र का उच्चारण करूंगा उस समय बन्दरी के सिवाय दूसरा कोई सुन लेगा तो वह पागल बन जायगा और गूंगा यानि उसकी जबान बन्द हो जायगी। वह कदापि नहीं बोल सकेगा इसलिये मेरा तो आप लोगों से निवेदन है कि आप लौट जाईये। फिर तो जैसी आपकी इच्छा। फिर

हमरा दोष मत निकालना । चूंकि मैंने पहले ही आपको चेतावनी दे दी है ।

राजा को तो योगी के वचन पर पूरा विश्वास था वास्तव में योगी बड़ा जादूगर है मंत्र पढ़ने के समय मैं पागल बन गया तो मेरी क्या दशा होगी ? अपने तो वापस चले जाना चाहिये ऐसा सोच भय के मारा राजा वापस लौट गया । किन्तु मंत्री तो साथ चलता ही रहा दोनों राजकुमारी के महल के नीचे द्वार पर पहुँच गये । फिर बाबाजी ने कहा, मंत्रीश्वर ! मालूम होता है आपतो मूर्खों के सरदार हो, मैं बार बार कह रहा हूँ चले जाओ, तू आपत्ति में पड़ जायगा । फिर तेरा रक्षक यहां कौन, व्यर्थ कष्ट में पड़ने के लिये स्वयं जा रहा है । अभी भी तुझे चले जाना चाहिये । महल मैंने देख लिया है अब मैं कन्या के पास चला जाउंगा और ठीक करते ही आप को सूचना भेज दूंगा ।

यह सुन मंत्री ने कहा योगीराज मेरा शरीर वज्र का बना हुआ है चाहे आप कुछ भी करले मेरा कुछ भी नहीं बिगडेगा । और मैं वैसे भागने वाला नहीं हूँ जैसे की राजा डरके मारे भाग गया । आप जी चाहे सो मंत्र पढ़े मुझे उसकी लेशमात्र भी परवाह नहीं है ।

योगी ने कहा अरे मूर्ख व्यर्थ क्यों मरता है ? मंत्र और औषधि का अचिन्त्य प्रभाव हुआ करता है । यदि तुझे विश्वास नहीं है तो मेरे मुख से एक कथा सुन लीजिये उस के बाद जो भी इच्छा हो कर लेना ।

किसी एक गांव में दो भाई थे उन दोनों के पुत्र पौत्र वगैरह बहुत परिवार था । घर में पुत्र पौत्र की वधूएं भी अनेक घर की आई हुई थी, सगी बहने भी क्यों न हो मगर एक घर

में वे भी शान्ति से नहीं रह सकती, किसी न किसी रूप में खटपट हुआ ही करेगी। स्त्री जाति का स्वभाव ही ऐसा है कि ईर्ष्या के मारा झगड़ा हो ही जायगा। घर की स्त्रियों में परस्पर झगड़ा होने लगा रात दिन देखा जाय तो महाभारत की तरह पांडवों का युद्ध घर में छिड़ गया। दोनों भाई झगड़े से दूर रहते थे। इस तरह घर की लड़ाई उन्हें पसन्द न थी। विचार-विनिमय कर दोनों अलग अलग हो गये। सदा की लड़ाई प्रतिष्ठा बरबाद कर देती है और बाप दादा की इज्जत पर भी पानी फिर जाता है ऐसा सोच धन दौलत सब कुच्छ चीजों का विभाग कर लिया और दोनों अलग अलग अपना व्यवहार चलाने लगे।

कुदरत की बलिहारी है बड़े भाई का पुण्य प्रबल था दिन दूनी और रात चौगुनी लक्ष्मी बढ़ने लगी। छोटे भाई का पुण्य अस्त हो गया, पाप काजोर हुआ सब धन समाप्त हो गया, विशाल कुटुम्ब और इज्जत की रक्षा कैसे करना यह सवाल पैदा हो गया। मगर छोटा भाई हिम्मतवान था। उपाय सोचा इसी निर्णय पर आगया कि जंगल से लकड़ी काट लाना और बजार में बेच जीवन निर्वाह करना। इसको कार्य रूप में परिणत कर दिया, दैनिक का यही कर्त्तव्य हो गया लकड़ी काट लाना और अपना गुज़ारा चलाना।

एक दिन वन में काष्ट लेने गया एक सुन्दर बड़ वृक्ष को ज्यों ही काटने लगा त्यों हि उस वृक्ष का अधिष्ठायक देव प्रसन्न होकर के बोला भाई ? यह मेरा निवास स्थान है इसको मत काट, और जो भी तूं चाहे मैं देने को तैयार हूं वर मांग ले। कठियारे ने कहा यक्षराज ? आप की आज्ञा है तो मैं आपके वृक्ष को नहीं काटूंगा। मगर मेरे कुटुम्ब परिवार के निर्वाह योग्य धन धान्य

का आप प्रबन्ध कर दो जिससे मेरा समय शान्ति से निकल जायगा ।

यक्षराज ने कहा अच्छा तुम जाओ तेरे घर सब व्यवस्था हो जायगी। कोई चिन्ता मत करो। तेरा सब भार मैं संभाल लूंगा। इस पर कटियारा बड़ा प्रसन्न हो गया। हमेशां की मथाकूट मिट गई रोज रोज जंगल में जाना लकड़ी काटना ले आना और वेचना यह सब खटपट मिट गई। अच्छा हुआ, धन्य है यक्षराज को कि मेरी स्थिति ही वदल डाली। आपका जीवन भर उपकार नहीं भुलूंगा। इस तरह विचार करता हुआ कटियारा अपने घर जाकर सब बर्तन देखने लगा तो सब तरह तरह की वस्तुओं से परिपूर्ण मिले। यह दृश्य देख उनके हृदय में हर्ष न समा सका और अपनी पत्नी को कहा हे प्रिये ? अब मुझे कभी भी कुच्छ भी मत कहना घर में सब सामग्री अपने आप आ जाया करेगी। जिस जिस बर्तन में जो जो चीजें भरी है चाहें जितनी निकालते रहना और फिर अपने आप भर जायगी। खुब खाओ पीयो और मजा करो। मगर मुझे मजूरी के लिये अब मत कहना। चूंकि मैं तो खा पी कर दिन भर घर के द्वार पर चौपाई पर पड़ा रहूँगा और घर की रक्षा करता रहूँगा। दूसरा अब मेरे कोई काम नहीं है। मेरे पर यक्षराज प्रसन्न हो गया है। जिन्दगी भर की तक्लीफ मिट गई है वह सब चीजें सदा देता रहेगा। सब बातें स्त्री को कह सुनाई वह भी खुश हो गई।

जब शान्ति से दिन पर दिन निकलने लगे, तब एक दिन बड़े भाई की पत्नी ने छोटे भाई की पत्नी को यानि जेठाणि ने देराणी को पूछा आज काल देवरजी कुछ भी महेनत वगैरह नहीं करते है दिन भर पड़े रहते है, तो खाने पीने का क्या प्रबन्ध है। कैसे काम चलता है ? देराणी विचारी भद्रिक थी उसने यक्ष सम्बन्धी

सब धृत्तान्त कह दिया, जेठाणी ने इस पर अपने पति से कहा तुम दिन भर मजूरी करते हो तब कोई खाने पीने का ठीक ठीक प्रवन्ध होता है। मगर देवरजी मजा करते हैं यक्ष प्रसन्न हो गया है। तुम भी जंगल में काष्ट लेने जाओ जिस से तुम्हारे ऊपर भी यक्षराज प्रसन्न होगा और वरदान मिल जायगा।

इच्छा न होने पर भी पत्नी की अत्यन्त प्रेरणा वश बड़ा भाई जंगल में काष्ट लेने के निमित्त हाथ में कुल्हाड़ी लेकर के रवाना हुआ सीधा उसी बड़ को ज्यों ही काटने लगा त्यों ही यक्ष ने उसे झाड़ से चिपका दिया। न तो हाथ छूटे और न कुल्हाड़ी। बड़ी आपति में फस गया। जोर जोर से चिल्लाने लगा, रास्ते में आते जाते लोगों ने यह आवाज सुनी और उनके पास गये। देखा तो बड़े संकट में पड़ा हुआ था। वे भी कहने लग गये लोभियों की यही दशा हुआ करती है। भाई के देखा देखी वरदान लेने आया जिसका यह प्रत्यक्ष परिणाम आया कि फस गया। लोग दौड़ते हुए उनके घर गये और उनकी पत्नी को सब समाचार कहे वह भी सुन ताजूब में हो गई दौड़ती हुई उसी वन में पहुँची जहां उसका पति चिपका हुआ था, सारी कहानी अपने पति से सुन वापस घर लौट आई, बलि बाकुला तैयार कर पुनः वहीं गई, दश दिशाओं में बलि बाकुला फैंक करके स्त्री बोली हे यक्षराज ? कृपा करके मेरे पति को छोड़ो और सब अपराध माफ करो।

यक्ष ने कहा भामिनी ! तेरे पति ने मेरा गुन्हा किया है फिर भी एक शर्त पर छोड़ देता हूँ, तेरे घर गाय भैंसें बहुत हैं उनका जितना भी घी रोज आता है वह घी तेरे देवर को देना मंजूर करे तो तेरे पति को छोड़ दूं। और जिस दिन घी तेरे देवर को नहीं दोगी, उसी दिन तुझे और तेरे पति को एक ही साथ

चिपका दूंगा। डर के मारा उसने यह स्वीकार कर लिया। उसी समय वह भी छुट गया। और उसकी पीड़ा भी बंद हो गई। लेकिन देवर को घी रोज देना पड़ता है। हे मंत्री! जैसे बड़े भाई लाभ की इच्छा से गया था मगर घर का घी भी खोना पड़ा। देखा! कैसा लाभ कमाया। इसलिये मेरे निषेध करने पर भी तूं आना चाहता है तो तेरी मरजी। तूं ही पश्चात्ताप करेगा। मुझे क्या? फिर मुझे मत कहना।

इस तरह योगी के मुख से कथा सुन मंत्री भी चला गया वास्तव में मंत्र की अमाप शक्ति है। न मालूम क्या हो जाय? मंत्री से सदा दूर ही रहना चाहिये। मंत्री बाबाजी की आज्ञा ले चला गया।

योगी बड़ा खुश हुआ, अब अपना काम सफल है, एकेले जाने से ठीक रहता है ऐसा सोच योगी रुप रूपसेन कुमार बड़े ठाठ से राजकुमारी के महल में पहुंच गया। सब दासियों को बाहर निकाल दी और किंवाड़ बंद कर दिया। फिर थोड़ा आडम्बर बताने के लिये कुछ गून गूनाने लगा, लोग समझ जाय कि कोई मंत्र पढ़ रहा है। अपनी जोली में से जड़ी बूटी निकाल कर वन्दरी रुप राजकुमारी के सामने रख दी। उसे सूंघते ही वह साक्षात् कन्या पूर्ववत् बन गई। उसी समय योगी ने किंवाड़ खोल दिया। दासियें दौड़ा दौड़ कर अन्दर आ गई देखा तो बंदरी के स्थान पर राज कन्या स्वस्थ बैठी है। दासीने कहा वाईजी? इस महा पुरुष ने आप को कष्ट से मुक्त किया है, यह महान् परोपकारी योगीराज है। और बड़े सज्जन है।

इस पर राजकुमारी ने कहा, धन्य है ऐसे पुरुष को कि जिन्होंने अपना सारा जीवन ही परोपकार में लगा दिया है दूसरों

के काम को करने वाले पुरुष विरले ही होते हैं। दूसरों के दुःख में दुःखी बनने वाले, बिना कारण स्नेह करने वाले और आपत्ति में सहायता करने वाले भी विरले ही होते हैं। यह महात्मा को जीवन भर सेवा से भी नहीं दिया जा सकता।

इस तरह राजकुमारी की बात सुन दासियें दौडा दौड कर के राजकुमारी के महल से निकल गई कोई तो राजा के पास, कोई राणी के पास और कोई मंत्री के पास दौड गई। राजकुमारी के स्वस्थ हो जाने की बधाई देने लगी।

इधर दासियों के चले जाने के बाद कुमारी ने योगी वेष में रहे हुए रूपसेन को यानि अपने स्वामी को पहिचान कर कहा, स्वामिन्। मेरी तरफ देखो। और सौम्यदृष्टि से दासी को पावन करो। और मेरा सब अपराध क्षमा करो। इत्यादि मीठे मीठे शब्दों में बहुत कुछ प्रार्थना करने पर भी योगी ने उसके सामने वक् न देखा। मानो कि मुझे कोई पहिचानता ही न हो। वैसे मौन धारण कर बैठ गया।

दासियों के द्वारा दी गई बधाई से राजा राणी मंत्री वगैरेह सब कुमारी के महल में हर्ष विषाद पूर्वक दौड आये। उस समय योगी ने कहा, महाराज! आपकी पुत्री को ठीक कर दी है। अब अपने वचन का पालन कीजिये।

यह सुन राजा चिन्ता में पड़ गया। यह तो योगी और विदेशी, और यह राजकन्या और विलासवती। इनका सम्बन्ध कैसे किया जा सकता, राजा ने मंत्री को कान में यह बातें कही और यह भी कहा कि तुम इसे एकान्त ले जा करके जाति कुल धर्म वगैरह सब पूछ लो जिससे दिल में तसल्ली हो जाय, फिर कन्या का विवाह करेंगे तो अच्छा रहेगा।

राजा की प्रेरणा से मंत्री बाबाजी को एकान्त ले गया, सुन्दर आसन पर बैठ कर इधर उधर की पहले खूब बातें की, और मौका देख मंत्री ने कहा, योगिराज आपका जन्म स्थान कहां है। आपका कुल और धर्म क्या है! और इस छोटी सी उम्र में योग लेने का क्या कारण हुआ? फरमाईये।

योगी ने कहा मंत्रीश्वर! आपने तो जाति कुल और धर्म सम्बन्धी प्रश्नों का तांता लगा दिया। वह बताने का न तो यह उपयुक्त समय है और न आप को इस खटपट में पड़ना चाहिये। राजा ने जो बात स्वीकार की है पहले उसका पालन हो जाना चाहिये। यदि राजा की इच्छा लड़की देने की न हो तो हथेली में थूंक कर वापस निगल जाय, बस मैं एक शब्द भी नहीं बोलूंगा और अभी चला जाउंगा।

पुनः मंत्री ने निवेदन किया योगिराज आप तो बड़े पुरुष है गुणवान और महा उपकारी है। सज्जन पुरुष ऐसे ही हुआ करते है कि थोड़ा भी दूसरे का दूषण न निकालें सदा संतोष रखें दूसरे के धन को हरण करने की बुद्धि न रखें स्वाश्लाघा न करें नीति यानि मर्यादाका उलंघन न करें उचित मार्ग का आदर करें क्रोध कदापि न करें और सब से क्षमा युक्त प्रिय वचन का ही व्यवहार करें। इसलिये आप का इतिहास यानि जीवन वृत्तान्त तो मैंने जान लिया है चूंकि आकार से; इंगित से, गति से, चेष्टा से, भाषण से, मुख और नेत्र के विकार से अन्तर्गत मन भी जान लिया जाता है तो क्या बाह्य नहीं जान सकता? किन्तु बात यह है कि राजा के दिल में जरा शान्ति हो जाय इसके लिये इतनी बातें पूछ रहा हूँ बाकि मेरे तो पूर्ण शान्ति है। राजा के हृदय में शंका रूप अंधकार भरा हुआ है कृपया

आप दीपक की भांति उस भ्रान्त को ध्वंस कर दीजिये इतनी मेरी प्रार्थना है।

मंत्री के कर्णप्रिय वचनों को सुन योगि वेष धारी रूपसेन ने कहा मंत्रीश्वर आप के मधुर शब्दों से मैं बड़ा प्रसन्न हुआ हूँ मेरा सत्य वृत्तान्त आज दिन तक मैंने किसी को न तो कहा है और न कहने का इरादा है। किन्तु आप के सामने कुछ भी छीपा रखने का विचार नहीं है क्योंकि संसार में शीतल चन्द्रमा माना गया है मगर उन से अधिक चंदन कहा है और उनसे भी ज्यादा शीतल सत्संग है। वह आज आप के सत्संग से मेरा दिल खुल गया है आप की वाणी बड़ी मधुर और सुधा के समान है। और आप की वाणी में जादूभरा है जिस से मेरे हृदय में आपने स्थान पा लिया है। दूध और मिश्री की भांति अपन एक हो गये हैं अतः अब आप से किसी प्रकार का भेद न रख कर सारा जीवन वृत्तान्त ही आप को सुना देता हूँ। सुनिये

राजगृही नगरी के राजा मन्मथ का पुत्र रूपसेन कुमार मेरा नाम है। घर से निकले हुए को मुझे बारह वर्ष हो आये हैं रास्ते में चार वस्तु की प्राप्ति मालण के घर डेरा लगाना गुप्तरीति से कन्या के साथ गांधर्व लग्न करना शूली पर चढ़ना जीन्दा हो जाना और बन्दरी बनाना यह सब कुछ मेरा ही षड्यंत्र है और अब जोगी के वेष में यहां पहुँच कर बन्दरी को मीटा देना इत्यादि सब वृत्तान्त मंत्री को सहर्ष कह सुनाया।

योगी नहीं बल्कि मन्मथ राजा का प्यारा पुत्र रूपसेन कुमार है इस परिचय से मंत्री बड़ा प्रभावित हुआ और राजा को सब घटना कह सुनाई कह सुनाई इस पर केवल राजा ही नहीं बल्कि सारी राजधानी के प्रत्येक कर्मचारी खुश हो गये। यह

सामाचार जब राजाकुमारी ने सुना तब न पूछो बात इतनी खुशी राजकुमारी ने मनाई। चूंकि पहले गूप चूप लग्न तो कर लिया था मगर कौन है। यह तो वह न जान सकी और न शर्म के मारे पूछ सकी। आज अचानक घटस्फोट हो जाने से न केवल राजकुमारी अपितु सारा राजवर्ग भी जल मीन वत कल्लोले करने लगा।

उसी समय राजा ने कर्मचारी को ज्योतिषी को बूलाने भेज दिया वह भी शीघ्राति शीघ्र अच्छे हौंशियार और प्रकाण्ड विद्वान ज्योतिषी को लेकर वापस हाजर हो गया। राजा के कहने के अनुसार सुन्दर मुहूर्त विवाह के लिये उसने निकाल दिया और राजा के द्वारा प्राप्त इनाम लेकर के रवाना हो गया।

रूपसेन ने योगी वेष को तिलांजली दे दी और सुन्दर आभूषणों से सुसज्जित होकर पहले की तरह स्वेच्छा से नगर में घूमने लगा। फर्क इतना है कि पहले मालण के घर डेरा था और अब मंत्री के मनोहर महल में निवास! इधर राजा और उधर मंत्री दोनों विवाह के लिये शानदार तैयारी में जुट गये।

राजा तथा मंत्री ने विवाह की तैयारी शुरु की सुन्दर पंडाल बनाया और लग्न मंडप की मनोहर रचना की शहनाई की मधुर ध्वनि से नगर गूंजने लगा। सधवा स्त्रियों ने धवल मंगल के गीत प्रारम्भ कर दिये। मंत्री के घर से वर राजा राजा के घर जान लेकर के आने की तैयारी में पड़ गये।

कल का योगी और आज के रूपसेन ने रत्न जड़ित अलंकारों को धार किया। हाथी घोड़ा नगारा निशान के साथ हजारों जानियें पूर्वक हाथी पर बैठ कर वर राजा रूपसेन कुमार राजमहल की तरफ रवाना हो गया रास्ते में दर्शक की बड़ी भीड़

लग गई यह भी देखने का कारण था कि राजकुमारी का योगी के साथ राजा विवाह कर रहा है । इस दृष्टि से कौतुकप्रिय दुनियां दौड़ा दौड़ करने लगी । अच्छे स्वरूपवान और योग्य वस्त्रवाले वर को देख प्रजा परस्पर बाते करने लगी । जोड़ी तो बढ़िया है । एक तरफ कृष्ण है तो दूसरी ओर राधा, एक तरफ महादेव है तो दूसरी ओर पार्वती, एक तरफ कल्पवृक्ष-है तो दूसरी ओर कल्पलता । वास्तव में कुमार कुमारी का जोड़ा तो देव देवांगना के रूप में है। वर राजा की सौम्य मूर्ति सब को आकर्षण कर रही थी । बरात राजमहल के द्वार पर पहुँच गई । राजा ने जमाईराज का शानदार सामैला किया और लग्न मंडप में समय पर प्रवेश करवाया । जिसमें अच्छे आसन लगे हुवे थे और मनोहर चवरी की रचना थी । वर कन्या ने अपना अपना आसन ग्रहण कर लिया हजारों आंखे उन दोनों पर स्थिर हो गई । राजपुरोहित ने मंत्रोचारण करते हुए कहा वर कन्या सावधान !

यह सुन दोनों खड़े होते ही पुरोहितजी के संकेत के अनुसार चवरी के चार फेरा फिरते हुए सदा के लिये प्रेम ग्रंथी में बंद गये । शान दार विवाह हो गया । करमोचन के समय राजा ने हाथी घोड़ा नगारा निशान हीरा पना माणेक मोती. दास दासी वगैरह खुब कन्या दान में दिया । रहने के लिये वही महल दे दिया जो कन्या का था, रुपसेन एक दिन योगी था वही आज राजा का जामात बन गया । बहुत दिन तक सुसराल में रह कर राजा राणी की आज्ञा लेकर के राजकुमारी को साथ ले चतुरंगी सेना के साथ रुपसेन अपने नगर की तरफ अच्छे मुहुर्त्त में रवाना हो गया । उस समय मालण को इतना धन दिया कि सात पीढी तक खाते जाय मगर न खुटे । और मालण को साड़ी ओढा कर के सगी महन बना दी । इसने भी भाई का खुब खुब

आभार माना और अपने जीवन में किये हुए अपराधों की भूरि भूरि क्षमा मांगी और विदाई के लिये शुभ आशीर्वाद दिया।

शुभ शकुन से प्रेरित रास्ते में चलते हुए रूपसेन का मार्ग के सब राजा महाराजा ने बड़ा सत्कार किया। थोड़े ही दिनों में रूपसेन अपने गांव यानि राजगृही नगरी में पहुंच गया। राजा ने पुत्र का सामैया पूर्वक नगर प्रवेश करवाया। सब लोग बड़े प्रसन्न हुए। लम्बे काल से जीवित पुत्र पुनः आ गया, इसकी खुशी में बड़े आडम्बर पूर्वक नगर मे महोत्सव मनाया। भगवान के मंदिर मे नित नई पूजा प्रभावना आंगी रोशनी आठ दिन तक लगातार करवाई, सारे नगर में चहल पहल हो गई। जैनाचार्य भगवान के कहने के अनुसार बारह वर्षों से पुत्र सकुशल सकलत्र पहुँच गया था। जिससे सब के हृदय में आचार्य देव के प्रति विशेष श्रद्धा पैदा हो गई। नगर प्रवेश के समय नागरिक प्रजा ने भी अच्छा स्वागत किया, सन्नारियों ने अक्षत से रूपसेन को वधाया। सारे नगर में हर्ष ही हर्ष छा गया।

सारे नगर में ही नहीं बल्कि सारे देश में आचार्य भगवान की अच्छी ख्याती हो गई चूंकि आचार्यदेव की वाणीयथार्थ हो गई। कहा गया है कि दिन की बिजली, और रात का गर्जना कभी खाली नहीं जाता, अर्थात् वर्षा होकर ही रहेगी। ठीक वैसे ही देववाणी और मुनिवाणी भी मिथ्या नहीं होती। इस तरह गांव में सब जगह प्रशंसा होने लगी।

इतने में नगर के बाहर उद्यान में आचार्य भगवान का पधारना हो गया। उद्यानपाल ने राजा को समाचार सुनाया. इस पर राजा ने उसे खुब इनाम दे विदा किया। तत्पश्चात् बड़े आडम्बर पूर्वक चतुरंगी सेना एवं अन्तेउर सहित राजा गुरु वंदन

के लिये रवाना हो गया। राजा का अनुकरण एवं अनुसरण प्रजा ने भी किया। सविधि वंदना कर सब के सब अपने २ योग्य स्थान पर बैठ जाने पर आचार्यदेव ने महामंगल कारी एवं सर्व क्लेश को निवारण करने वाली, मधुर ध्वनि से देशना प्रारंभ की। जिस में फरमाया कि संसार में मनुष्य भव मिलना बड़ा दुर्लभ है उस में भी आर्य जाति एवं आर्यकूल और धर्म के साधन मिलना उनसे भी ज्यादा दुर्लभ है और इन से भी कठिन समस्या तो यह है कि धर्म पर पूर्ण श्रद्धा होना। धर्म पर पूर्ण श्रद्धा हुए बिना कोई भी काम सफल नहीं हो सकता, इसीलिये तो कहा गया है कि "विश्वासो फलदायक" विश्वास ही फल देता है।

धर्म पर पूर्ण श्रद्धा जिस व्यक्ति की है वही संसार का अन्त कर मोक्ष में चला जा सकता है. श्रद्धा सम्पन्न व्यक्ति ही तीर्थयात्रा, रथयात्रा वगैरह सुकृत. कार्य में भाग लेता है और शत्रुंजय तीर्थ की यात्रा कर अपने जीवन को पवित्र बनाता है। जिसने मानव भव पाकर इस तीर्थ की यात्रा. न की उसका तो अभी गर्भ में ही निवास है! चाहें वह कितना ही बड़ी दुनियां की दृष्टि में क्यों न हो जाय। भले वह डाक्टर क्यों न बन जाय! वकील अथवा न्यायाधीश क्यों न बन जाय मगर वह तीर्थयात्रा नहीं करता है तो वह गर्भ में ही है ऐसा ज्ञानी बताते हैं। एक एक पद तीर्थयात्रा के लिये बढाता है वह क्रोडों भवों का पाप खपाता जाता है जैसे कि आग काष्ट को बाल जाल भस्म बना देती है ठीक वैसे ही तीर्थ रूप अग्नि से कर्म रूप इंधन बल जल कर भस्म हो जाते हैं। जिन्होंने तीर्थ स्थानों पर परिभ्रमण किया है अथवा करने को तीव्र उत्कंठा लगी हुई है वे लोग संसार में भटकना बंद कर देते हैं अर्थात् उन लोगों को जल्दी शिवपुर मिल जायगा। तीर्थ पर जा करके जो व्यक्ति वित्त को सद्पात्र में व्यय करता है उनके घर कमला सदा स्थिर बन कर रहती है। जो

व्यक्ति तीर्थ पर जाकर तीर्थपति की पूर्ण एवं निर्मल भावना से पूजा भक्ति करता है वह जगत् के पूज्य बनता है यानि सारी दुनियां उस व्यक्ति की पूजा करेगी।

इस तरह गुरु के उपदेश को सुनकर राजा ने खड़े होकर के कहा भगवन्! आज के उपदेश से मेरा हृदय बड़ा प्रभावित हुआ है और आपकी वाणी मेरे रोम रोम में उतर गई है। मैं संघ समक्ष आपकी आज्ञा के अनुसार यह प्रतिज्ञा धारण करता हूँ कि जब तक पतित पावन शत्रुंजय तीर्थ की यात्रा न करूं तब तक दूध दही का सेवन नहीं करूंगा। अर्थात् मैं आज से ही त्याग करता हूँ। ऐसा अभिग्रह धारण कर राजा गुरु को पुनः पुनः वंदन कर सपरिवार अपने महल में लौट गया। नागरिक प्रजा भी अपनी २ शक्ति के मुताबिक नियमों को धारण कर अपने २ स्थान की ओर चली गई। और आचार्यदेव भी भव्य जीवों को प्रतिबोध देने के लिये बिहारी बन गये।

राजा ने सुन्दर मुहूर्त्त निकलवाया, और हजारों नर नारी के साथ शत्रुंजय का शानदार संघ निकाला। मार्ग में चलते हुए अनेक गांव शहर और नगर आदि में पडाव डालते हुए पूजा भक्ति करते हुए, स्वामीवात्सल्य करते हुए और जगह २ मंदिर पर नवीन ध्वजा चढाते हुए यथा समय चतुर्विध संघ शत्रुंजय तीर्थ पर पहुँच गया। संघ समुदाय साथ दादा की यात्रा कर सब बड़े प्रसन्न हुए। अट्ठाई महोत्सव तीर्थ पर मनाया इतना ही नहीं अपितु आठों ही दिन नवकारसी वगैरह का ठाठ भी अपूर्व रहा। राजा ने संघ का वस्त्र आभूषण भोजन वगैरह से अच्छा स्वागत किया। राजा कुछ दिन के लिये दादा की यात्रा के निमित्त वहीं पर ठहर गया।

भवितव्यता सदा बलवती है काल से न तो कोई बचा है और न कोई बच सकेगा। राजा हो या रंक, लाखों उपाय करने पर भी मृत्यु अवश्यंभावी है। अचानक राजा बीमारी के मुख में पड़ गया। जिसमें भी शूल रोग। सब तरह के उपचार करने पर भी सफलता न मिली सो न मिली। टूटी के लिये बूटी क्या कर सकती है ? सब लोग उदासीन हो गये ! संघपति स्वयं बिमार पड़ जाय तब तो स्वभाविक ही है कि चिन्ता में सब पड़ जाय। सब कुछ इलाज विफल गये एक दिन राजा यमराज का सदा के लिये अतिथि बन गया। सारा परिवार शोक सागर में डूब गया। शुभ ध्यान एवं तीर्थ की असीम भक्ति पूर्वक राजा मर करके देवलोक में जा बसा। ऐसा इतिहास साक्षी दे रहा है।

रूपसेन ने शोक संतप्त मानस से पिताजी की अन्तिम यात्रा शानदार निकाली, जिसमें हजारों नर नारियों ने भाग लिया। अपनी २ श्रद्धाञ्जली राजा को अर्पित की। कुच्छ दिन और ठहर कर तीर्थ की भाव से यात्रा कर रूपसेन संघ सहित सपरिवार अपनी राजधानी में लौट आया।

पिताजी का विरह रूपसेन को बहुत खटकता था। चूंकि बारह वर्ष तक विदेश रहने से पिताजी की सेवा न कर सका, अब सेवा करने का मौका मिला तो निर्दयी दैव ने पिता को ही उठा लिया। रात दिन इसी विचारों के साथ रूपसेन उदासीन रहने लगा।

अपनी राजधानी में रूपसेन के आने पर मंत्री, सामंत एवं उच्च कर्मचारी तथा नागरिक प्रतिष्ठित व्यक्तियों ने मिल करके शुभ दिन और शुभ समय में रूपसेन को राजगद्दी पर बैठा दिया। राज्याभिषेक के समय शकुन सुन्दर हुआ। सारे देश में रूपसेन राजा की आज्ञा प्रसारित कर दी। अनेक राजा

महाराजाओं, मंत्रियों उच्च व्यापारियों ने राजा को भेटणा किया, वधाई दी। किसी ने हाथी तो किसी ने घोड़ा, किसी ने रथ तो, किसी ने पालखी, किसी ने वंदूक तो, किसी ने तलवार, इस तरह सब ने रूपसेन के सामने नजराना किया, रूपसेन तो उदार दिल की तस्वीर थी,। केवल लेना ही नहीं सीखा, वह तो देना सीखा था। वह भी योग्य राजाओं का यथेष्ट सम्मान कर कुच्छ न कुच्छ देता जाता था। और सामंत, मंत्री वगैरह का भी अच्छा सन्मान रूपसेन ने किया। भगवान के मंदिर में भी राज्याभिषेक के समय महोत्सव राजा ने मनाया। कैदियों को छोड़ दिये, दीन दुःखी याचक वर्ग को यथेष्ट दान देकर के संतुष्ट किये। जिससे सारे नगर में रूपसेन राजा की भूरि भूरि प्रशंसा होने लगी। रूपसेन भी न्याय पूर्वक प्रजा का पालन करना अपना परम कर्त्तव्य समझता था। और इसी कर्त्तव्य मार्ग के अनुसार चलने में सदा तत्पर रहता था। सारे देश में इसकी कीर्ति भी वहुत वहुत फैल गई और अधिकतर फैलती ही जा रही थी।

नगर के बाहर उद्यान में आचार्य भगवान का पधारना हुआ उद्यानपाल के द्वारा राजा समाचार पा सपरिवार वंदनार्थ गया। सविधि वंदना के पश्चात् अपने अपने स्थान पर सब लोग बैठ गये। उस समय परमोपकारी आचार्य देव ने संक्षेप में सारगर्भित थोड़ा सा उपदेश फरमाया, जिसमें बताया कि करोड़ों भवों में दुर्लभ मानव भव को पाकर संसार समुद्र में जहाज के समान जिन भाषित धर्म की आराधना करनी चाहिये यदि मानव धर्म का सहारा न लेगा वह डूब मरेगा। अतः आत्मा के उत्थान के लिये जीवन में धर्म करणी करना आवश्यक ही नहीं बल्कि अत्यंत जरूरी है जिससे आत्मा का कल्याण हो जायगा। इस तरह गुरुदेव का उपदेश सुन रूपसेन ने निवेदन किया।

भगवन ! किस कर्म के उदय से पिताजी से बारह वर्ष का वियोग रहा ! किस कर्म के बल पर चार वस्तुऐं प्राप्त हुई ! किस कर्म के प्रभाव से विदेश में भी धन एवं महत्व बढता ही गया । और किस कर्म से बीच बीच में दुःख भी मिला । इत्यादि सब बातें बताने की कृपा करें ।

यह सुन गुरुदेव ने कहा, राजन् ! इन सब बातों का समाधान पूर्व भव को सुने बिना नहीं हो सकता । अतः सावधान होकर के अपना पूर्व भव सुन लेना चाहिये ।

एक तिलकपुर शहर था जिसमें सुन्दर नाम का एक खेडूत रहता था । उसकी पत्नी का नाम था मारुना । एक बार उनके खेत की पाली पर आम्बे के वृक्ष के नीचे किसी योगी महात्मा ने निवास किया । एक मास पर्यन्त वहां रहा, उन योगी पुरुष की उस खेडुत ने खूब सेवा की भक्ति की और आहार पानी का भी लाभ उठाया । सेवा से देव दानव सभी वशीभूत हो जाते हैं तो क्यों मानव वश में न हो ? विद्या सिद्ध पुरुष उस खेडूत पर प्रसन्न हो गया । और कहा बेटा ! लो, तुझे एक विद्या देता हूँ, इस से जो भी तेरी इच्छा होगी वह सब कुच्छ इसमे हो जायगा । चाहें जो रूप बना सकते हो और मनो वांछित पदार्थ की पूर्ति हो जायगी । इसकी रक्षा करना । ऐसा कह कर वह विद्या सीखा करके योगी तो चला गया । खेडूत ने सोचा, विद्या से यदि सब काम हो जाय तो फिर महेनत करने से क्या फायदा ? उस विद्या के द्वारा ही सब काम करने लग गया । किन्तु दीन दुःखी को भी सहायता करता था । दीन दुःखी का उद्धार करना ही सची मानवता है ।

एक बार सुन्दर खेडूत के खेत के उसी आम्र वृक्ष के नीचे

अचानक जैन मुनियों ने रात्रि विश्राम लिया। प्रातः काल उठते ही आगे जाने लगे इतने में खेडूत सपरिवार वंदन के लिये पहुँच गया वंदना के बाद उपदेश की याचना की, महाराज ने भी योग्य समझ उपदेश देना शुरु किया। जिसमें दया दान और दम इन तीन प्रकार के उपर दृष्टान्त उपनय देकर के उसे खूब समझाया, और यह भी कहा, हे भद्र! तूं खेती करता है जिससे जीवों की हिंसा बहुत होती है उसमें ज्यादा पाप है, इसको बंद किया जाय तो सर्व श्रेष्ठ है। इस पर खेडूत ने कहा, महाराज! आपका वचन यथार्थ है किन्तु मेरे कुटुम्ब परिवार का पोषण इसी पर निर्भर है, पशु भी बहुत है, सब का जीवन खेती पर है यदि यह धंधा ही बंद कर दिया जाय तो समझ लीजिये कि हम लोग सब मृत्यु के मुख में समा जाय। इसलिये खेती के बिना तो हमारा निर्वाह कैसे हो सकता है?

महाराज ने कहा, मैं यह नहीं कहना चाहता हूँ कि तुम अपना धंधा ही बद कर दो। मैं तो केवल यह चाहता हूँ कि तुम अपने लिये कुछ नियम रखो जिससे तुझे बड़ा लाभ होगा। थोडा भी पाला हुआ नियम परभव में सद् गति देता है इसलिये जो भी इच्छा हो, किसी न किसी प्रकार का थोड़ा बहुत नियम जीवन में जरूर रखना चाहिये।

यह सुन खेडूत ने कहा महाराज! यदि नियम से बहुत लाभ है तो मैं यह नियम स्वीकार करता हूँ कि प्रतिदिन जिनेश्वर भगवान को दर्शन वंदन पूर्वक तांदूल का स्वस्तिक भेट करूंगा। शक्ति के मुताबिक सुपात्र में दान दूंगा। बडे जीवों की हिंसा नहीं करूंगा, और रात में भोजन नहीं करूंगा। इन चार नियमों का सम्पूर्णतया पालन करूंगा, यह आपके सामने प्रतिज्ञा करता हूँ।

इस पर गुरुदेव ने कहा अच्छा किया ये चार नियम तुम ने ले लिया है इसको तोड़ना भयंकर पाप है। इन नियमों के पालन से इस लोक तथा परलोक में तुझे बड़ा सुख सौभाग्य मिलेगा।

जिनेश्वर भगवान के सामने शुद्ध श्रद्धा सम्पन्न होकर अक्षत चांवलों से जो साथिया बनाता है वह व्यक्ति परभव में अखंड सुख सब तरह से पा लेता है।

जैसा खेत और जल हो वैसा अनाज पैदा होगा, अच्छी जमीन पर पानी पड़ने से सुन्दर फसल पैदा हो सकती है और ऊपर भूमि पर पानी गिरने से सर्वथा निष्फल जाता है, यदि उसमें अनाज भी डाल दिया जाय तो वह भी अस्त हो जायगा! ठीक वैसे ही सुपात्र में दिया हुआ दान अनन्त पुण्य उपार्जन करता है और कुपात्र में देने से सिवाय नुक्शान के क्या मिलेगा? आम्बे के मूल में पानी डालने से केरी मिलेगी और नीम्ब के पेड में डालने से कड़वी निंबोली ही मिलेगी। इसलिये कहा गया है कि सुपात्र आम्बे के सदृश और कुपात्र नीम्ब के समान है अतः पात्रापात्र का विचार कर दान देने से विशेष फायदा है और उनका फल भी मोठा है।

जो आदमी हिंसा करता है वह हिंसक पशु के शरीर पर जितनी रोम राजी है उतने हजार वर्ष पर्यन्त नरक का अत्यंत और असह्य दुःख भोगता है, ऐसा हिन्दु शास्त्र बताता है, और जहां हिंसा का साम्राज्य है वहां सदा दुःख दौर्भाग्य है और वहां धर्म भी नहीं है। तुमने स्थूल हिंसा का सर्वथा त्याग किया है किन्तु जहाँ तक बने सूक्ष्म में सूक्ष्म जीवों की भी रक्षा करते रहना। इससे अच्छा लाभ होगा। धर्म का सार ही दया है जिस दर्शन में दया, नीति, क्षमा, और समता नहीं, वह दर्शन दर्शन में नहीं।

किन्तु दर्शनाभास है। इसलिये सम्पूर्णतया दया न पाल सकें तो सवा विश्वा तो जरूर पालन करते रहना चाहिये, जिस से तेरा कल्याण होगा।

नरक में जाने के मुख्य चार द्वार बताये हैं जिसमें सर्व प्रथम द्वार रात्रिभोजन माना है, तुमने इस नियम को स्वीकार कर नरक का एक द्वार तो बंद कर दिया है धीरे धीरे चारों भी हो जायगा। रात में अन्धकार छा जाता है चाहे कितना भी प्रकाश किया जाय मगर सूक्ष्म जीव दृष्टि गोचर नहीं होते। यदि जूं कीड़ि, वगैरह खाने में आ जाय तो अनेक प्रकार के रोगों का होना संभव है। तुमने रात में खाना बन्द कर दिया है अच्छा किया। सदा के लिये चारों नियम पालन करते रहना। अच्छा धर्मलाभ ! ऐसा कह कर मुनिराज तो विहार कर पधार गये।

उनके बाद वह सुन्दर नामक खेडूत चारों नियमों का यथेष्ट पालन करता जा रहा था क्योंकि वह पाप भीरु था।

एक बार खेडूत के खेत के पास में होकर के जैन मुनियों का निकलना हुआ उस समय खेडूत ने भक्ति पूर्वक उन मुनियों को अपने घर ले जाकर मालपूवे का लाभ लिया, और भूरि भूरि अनुमोदना की धन्य है आज का दिन और आज की घड़ी ! मेरे घर महान् महात्माओं के पगले पड़े। मेरा घर पवित्र हो गया। और मेरा जीवन भी आज सफल हो गया। दान का यही उत्तम भूषण है। दान का पांच भूषण कहा है—

आनन्द के आंसू, रोमराजी खड़े होना, मीठे २ बोलना, बहुमान देना और अनुमोदना। इसी तरह दूषण भी पांच कहा है--

अनादर, विलम्ब, मुख फैर लेना, कडुआ बोलना, और देने के बाद पश्चात्ताप करना। दूषण भूषण के परिणाम को सोच कर ही दान देना चाहिये, अधिक लाभ मिल सकें।

इस तरह उच्च भावना के साथ उस खेडूत ने महात्माजी को वहराया, वे भी उसे लाभ देकर के चले गये।

खेडूत एक बार अपने खेत में काम कर रहा था उनका सुसराजी अचानक आगये, बहुत कुछ सत्कार किया, दो चार दिन ठहरने के बाद जाना चाहा तब सुसरा ने जमाईराज को कहा मैं अपनी लड़की को कुछ दिन ले जाना चाहता हूँ, लड़की भी जाने को तैयार हो गई मगर जमाईराज ने सुसराजी को इन्कार कर दिया। इस पर उसने अपने पति से कहा, मुझे बहुत दिन यहां रहते हुए हो गये। एक बार मेरी मां से मिलने जरूर जाउंगी। मैं तो पिताजी के साथ जरूर चली जाउंगी। कदाग्रह पकड़ बैठ गई खेडूत ने बहुत कुछ उसे समझाया मगर हठ न छोडी सो न छोडी।-

खेडूत ने पत्नी की आंख चुरा कर उसके बाप को यानि अपने ससुर को रूप परावर्तिनी विद्या के बल पर बाच्छड़ा बना दिया। और थंभे के बांध कर खेत पर चला गया। बारह घड़ी बंधा रहा,। संध्या के समय पुनः उनका पति घर आने पर पत्नी ने पूछा, मेरे पिताजी कहां गये! उसने कहा वे तो अपने घर सुबह ही चले गये हैं।

इस पर स्त्री ने झगड़ा मचा दिया, स्वामिन्! मुझे अपने पिताजी के घर भेज दो, वरना मैं अन्न जल त्याग दूंगी। फिर भी यदि नहीं भेजेगे तो मैं कुआं में पड़ आत्महत्या कर दूंगी। ऐसी वाणी सुना कर यह तो एकान्त जा बैठ गई।

आखिर पुरुष को स्त्री के सामने झुकना ही पड़ता है क्योंकि होम्यो गवर्नमेन्ट रहा। इनकी आज्ञा माने बिना चल भी नहीं सकता। उसी समय उसे मनाना शुरू किया और बाच्छड़े को मिटा कर पुनः पुरुष बना दिया। और अपनी पत्नी को उसके बाप के साथ पियर भेज दी।

उनके चले जाने के बाद भी वह दान देता ही रहता था, मुनियों की खूब भक्ति करता था, जीवदया पालता था और रात्रि भोजन कदापि नहीं करता था जिससे वह खेडूत नियम के बल पर मर करके मन्मथ राजा के घर पुत्र के रूप में आया, जिसका नाम रूपसेन कुमार है जो कि तूं आज राजा बना है। यानि तूं ही पूर्वभव में खेडूत था धर्माराधन के बल पर यहां राजा हुआ है। और तेरी पूर्व भव की पत्नी ने भी खूब दान दिया और तेरी अनुमोदना की, जिससे वह मर करके कनकपुर शहर में कनकप्रभ राजा की पट्टरानी कनकमाला की कुक्षी में कन्या के रूप में आई जिसका नाम राजकुमारी कनकावती और वह आज तेरी पटरानी है। पूर्वभव में भी तुम्हारे घनिष्ठ प्रेम था यहां पर भी वैसा ही प्रेम हो गया।

राजन्! रूपसेन! तूं पूर्व के भव में खेडूत था, सुन्दर चार नियमों के पालन से तुझे चार वस्तुएं प्राप्त हुई। जर्जर कंथा जादुई दंडा, पवन पावडी और अक्षयपात्र, इन चार वस्तुओं के बल पर यहां सब कुछ काम तुम्हारे सिद्ध हुए हैं। सुपात्र में दान देने से यहां जगह जगह पर धन दौलत मान प्रतिष्ठा वगैरह की अधिकाधिक वृधि होती गई। और अपनी पत्नी को पियर न भेजने के लिये उनके पिताजी को तुमने बाच्छडा बारह घडी के लिये बना दिया था। यानि बाप बेटी के लिये बारह घडी का विरह अर्थात् वियोग करवाया था जिससे तेरे पिताजी के साथ बारह

वर्ष का वियोग रहा। मानव जैसा कर्म करता है वैसा ही भोगना पडता है एक बाबा ने ठीक ही कहा है कि "जो जैसा करे सो वैसा पावे" इसलिये मानव को सदा सद् विचार रखना चाहिये जिससे जीवन में अशुभ का बंद न पड़े और शुभ बंधन का फल भी सदा मीठा है।

इस प्रकार गुरुदेव के मुख से अपने पूर्व भव के वृत्तान्त को सुन कर सादर सविधि वंदना कर रूपसेन सपरिवार अपनी राजधानी में लौट आया। गुरु के पास से लिये हुए श्रावक धर्म रूप बारह व्रतों का पालन प्रेम से करने लगा। और जो पूर्व भव में चार नियम लिये थे वे चार नियम पुनः रूपसेन ने ले लिया। और न्याय नीति के अनुसार अपने विशाल राज्य का पालन करने लगा।

मानव कुच्छ और ही सोचता है और होता है अन्यथा! राजा रूपसेन भी अचानक बीमारी के चक्र में पड़ गया। विपम ज्वर नाम की व्याधि पैदा हो गई राजधानी में दौडा दौड होने लगी। अनेक हकीम डाक्टर वैद्यराज का उपरा उपरि आना शुरु हुआ, एक दो नहीं बल्कि काफी दिन निकल गये बहुत कुच्छ उपचार किये किन्तु राजा के शान्ति के बदले अशान्ति ही बढने लगी। राणी, पुत्र कर्मचारी मंत्री वगैरह सब चिन्ता में पड़ गये और सारी राजधानी में चहल पहल हो गई।

इतने में कोई वैदेशिक अष्टांगनिमित्त के जानकार एक व्यक्ति का आगमन हुआ, सारे गांव में उनकी अच्छी ख्याति हो गई। वह त्रिकाल ज्ञानी यानि भूत भविष्य और वर्त्तमान की बातें सही बता देता था। जिससे सारे गांव के लोग उनके पास जमा होते रहते थे। यह समाचार राजा के कानों तक पहुँचा गये।

मंत्री ने उसको बुलाआ। वह भी राज्य के आमंत्रण पर राजमहल में जा राजा को अच्छी तरह से देख भाल कर बोला, महाराज! आपके रोग डाक्टरों से असाध्य है। चूंकि यह कोई शारीरिक अथवा मानसिक दर्द नहीं है यह तो किसी देव के द्वारा रोग पैदा किया गया है। इसकी शान्ति तभी हो सकेगी यदि देव के नाम पर किसी जानवर को बलिदान दिया जाय और उनके अवशेष भाग का मांस आप खावे तो जल्दी से जल्दी आराम हो जायेंगे। विषम ज्वर को शान्त करने में यही सुन्दर उपाय है अन्यथा रोग बढता ही रहेगा!

यह सुन राजा ने कहा वैद्यराजजी! माफ कीजिये, आपका इलाज मैं नहीं चाहता, भले मैं कल मरता हूँ तो आज ही मर जाउं, मगर लिये हुए व्रतों का खंडन कदापि नहीं करूंगा। टूटी की बूटी किसी के पास नहीं है एक दिन जाना जरूर है एक कवि ने कहा है कि---

आया है सो जायगा, राजा रंक फकीर।
कोई रथ चढि चल रहा, कोई बंधा जंजीर॥
जाना है रहना नहीं, जाना विश्वाबीश।
थोड़े दिन की जीन्दगी, भज ले श्री जगदीश॥

रूपसेन ने आगे कहा, जाना तो जरूर है ही तो फिर व्यर्थ मैं अपने नियम का भंग क्यों करूं? परमात्मा का भजन कर आत्म कल्याण करूंगा। यही मेरे लिये श्रेष्ठ मार्ग है।

राजा के निश्चयात्मक वचनों को सुन कर नैमितिक ने अपना रूप बदल दिया। देव के रूप में सामने खड़ा होकर बोला, महाराज मैं स्वयं देवता हूँ, निमित्तिये का रूप करके आया

था और यह रोग भी मैंने ही पैदा किया है। आपको भूरी भूरि धन्यवाद है कि नियम पालने में आप सुदृढ़ है।

इन्द्र महाराज ने सौधर्म देवलोक की सभा में आपकी खूब प्रशंसा की, संसार में रूपसेन के समान दृढ व्रतधारी कोई नहीं है। इन वचनों पर विश्वास न होने से मैं आपकी परीक्षा करने आया। और यह सब कुच्छ माया मैने ही रची थी। रोग पैदा करना और मांस के लिये आग्रह करना। किन्तु आप अपने नियम पर अटल रहे प्राणों की परवाह न की। मृत्यु आपको पसंद है मगर नियम तोड़ना पसंद नहीं !! धन्य है महाराज ! आप जैसे नरेन्द्रों से ही यह पृथ्वी अलंकृत है। आपकी दृढ प्रतिज्ञा देख मैं बडा प्रसन्न हूँ किन्तु एक बात जरूर कह देता हूँ, आपकी आज से पन्द्रह में दिन मृत्यु होगी नाग के द्वारा आपका प्राणान्त होगा इसमें कोई शक नहीं। मुझे तो यही बडा संतोष है कि तुम अपने व्रत के लिये सदा सावधान और सतर्क हो, वास्तव में इन्द्र की प्रशंसा यथार्थ और सही है। अच्छा, राजन् ! आनंद करो। मैं जाता हूँ ऐसा कह कर देव अदृश्य हो गया।

राजा स्वस्थ हो गया सब स्वप्न की तरह खेल बीत गया। देव वाणी मिथ्या नहीं होती, राजा विशेष धर्म ध्यान में उद्यत रहने लगा। कुदरत सदा बलवती है उसे कोई हटा नहीं सकता। पन्द्रहवें दिन राजा हाथी पर बैठ कर सवारी घूमने निकला, राजमार्ग में सवारी जा रही थी अचानक ऊपर से एक नाग राजा के ऊपर गिर पड़ा और पड़ते ही हाथी के होदे पर ही राजा को काट खाया वहीं राजा के प्राण पंखेरू सदा के लिये उड़ गये। किन्तु राजा शुभ ध्यान के द्वारा मरते ही स्वर्ग में चला गया।

राजधानी में शोक छा गया। अन्तिम विधि शानदार की गई। उनके पुत्र को राज्यगादी पर बैठा दिया। रूपसेन सदा के

लिये सो गया किन्तु उनके जीवन कर्त्तव्य की सुगंध यद्यपि संसार में विद्यमान है और न मालूम कितने काल तक संसार में अमर रहेगी।

प्रिय पाठक वृन्द ! रूपसेन की तरह हर एक को यथा शक्ति नियम पालन करते रहना चाहिये जिससे सब तरह से सुख सौभाग्य प्राप्त हो सकें।

जो व्यक्ति शुद्ध आशय पूर्वक नियमों का पालन करता है तो रूपसेन की भांति पद पद पर मान प्रतिष्ठा धन दौलत और वैभव मिलता ही रहेगा। और जगत में वह व्यक्ति सर्वत्र विजय पा सकेगा। अतः मानव को चाहिये कि यथा शक्ति नियमों का पालन कर आत्म कल्याण करें। यही शुभ कामना ! जय वीर !!!

[जैनाचार्य श्रीमद् जिनसूरीश्वरजी महाराज द्वारा विरचित रूपसेन चरित्र के बल पर, तपागच्छीय मेवाड़ केसरी श्रीनाकोडा तीर्थोद्धारक आचार्यदेव श्रीमद् विजय हिमाचल सूरीश्वरजी महाराज के विद्वान् शिष्यरत्न व्याकरण, साहित्यरत्न विद्यावाचस्पति मुमुक्षु भव्यानन्द विजय द्वारा हिन्दी भाषा में यह कथा लिखी गई।]

॥ समाप्त ।